दीनियात

सैयद अबुल-आला मौदूदी

अनुवादक

डॉ॰ फ़रहत हुसैन

विषय सूची

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।'

कुछ किताब के बारे में

मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी (रह.) की मशहूर किताब 'दीनियात' आसान हिन्दी ज़बान में पेश करते हुए हमें बेहद ख़ुशी हो रही है। नियात का तआरुफ़ कराते हुए मौलाना मरहूम ने लिखा है–

"यह छोटी-सी किताब उन नौजवानों के लिए लिखी गई है जो ईस्कूल के आख़िरी दर्जों या कॉलेज की इब्तिदाई क्लासों में तालीम पा रहे, उनके अलावा दूसरे लोग भी इससे फ़ायदा उठा सकते हैं...।"

"हमारे यहाँ दीनियात की पूरी तालीम का आम तरीक़ा यह रहा है कि तबा (छात्रों) को ज़्यादातर वे फ़िक्ही मसले-मसाइल पढ़ाए जाते हैं, जिनमें माज़, रोज़ा, पाकी, नापाकी और इसी तरह की दूसरी चीज़ों की तफ़सील ती हैं। अक़ीदे की तालीम इसके मुक़ाबले में कुछ कम होती है और जो ती है उससे कोई ख़ास नतीजा हासिल नहीं होता। पढ़नेवालों को आख़िर क़्त तक यह मालूम नहीं होता कि इस्लाम क्या है, क्या चाहता है और क्यों हता है, इस्लामी अक़ीदों का इनसान की ज़िन्दगी से क्या ताल्लुक़ है? वे गर माने जाएँ तो फ़ायदा क्या है और अगर न माने जाएँ तो नुक़सान क्या ? इस्लाम सिर्फ़ हुक्म देकर उन अक़ीदों को मनवा लेना चाहता है या उसके स उनके सही और सच्चे होने की दलीलें भी हैं? ये तमाम चीज़ें दीन की मझ और अक़ीदे को ठीक करने के लिए बहुत ज़रूरी हैं। जब तक ये च्छी तरह समझ न ली जाएँ, सिर्फ़ मसले-मसाइल को बता देने से कोई ायदा नहीं होता, क्योंकि ईमान के बग़ैर अहकाम की इताअत (हुक्मों का लन करना) मुमकिन नहीं, और अक़ीदे को ठीक-ठीक समझने से ही ईमान ज़बूत हो सकता है।"

"इसी तरह नमाज़ और रोज़े के बारे में अहकाम बताने से ज़्यादा ज़रूरी ह है कि तालिबे-इल्म (छात्र) को इबादत और शरीअत के हुक्मों की कमतें समझाई जाएँ ताकि वे दिल से उन अहकाम की पैरवी के लिए तैयार जाएँ। नमाज़ की तरकीब ज़ाहिर है कि उसी के लिए मुफ़ीद हो सकती

है जो नमाज़ पढ़ना चाहता हो, वरना जो सिरे से नमाज़ ही पढ़ने के लि तैयार न हो उसे यह बताने से क्या फ़ायदा कि नमाज़ किस तरह पढ़ चाहिए। इसलिए नमाज़ के अहकाम बताने से पहले यह बताने की ज़रूर है कि नमाज़ है क्या चीज़? यह आपपर क्यों फ़र्ज़ की गई है? इसका फ़ाय क्या है और इसे न पढ़ने से आपको क्या नुक़सान पहुँचेगा? इसी तरह दूस अहकाम के बारे में भी सोच सकते हैं कि पहले इन सबको दिल में उतार ज़रूरी है, फिर कहीं इनकी तफ़सील बयान करना मुफ़ीद हो सकता है।'

"मैंने यह किताब इसी ज़रूरत को देखते हुए लिखी है। इसमें दीन तालीम का एक नया तरीक़ा अपनाने की कोशिश की गई है, जो पुराने तरी से बहुत-कुछ हटकर है और मौजूदा ज़माने के लिहाज़ से ज़्यादा फ़ायदेमन है।"

"मैंने इसमें क़ुरआन मजीद की तालीम का ख़ुलासा पेश किया है औ उसके लिए दलीलें भी क़ुरआन मजीद ही के अन्दाज़ में दी हैं। ख़ुदा क जिस मक़सद के लिए यह कोशिश की गई है, वह पूरा हो और यह किता दीनी तालीम के लिए एक नए और ज़्यादा अच्छे नतीजे देनेवाले तरीक़े क दरवाज़ा खोल दे।"

हिन्दी में यह किताब 'इस्लाम-धर्म' के नाम से हिन्दी भाषी ग़ैर-मुस्लिम में बेहद मक़बूल है, जिसका तर्जमा मुहतरम मौलाना फ़ारूक़ ख़ाँ साहब किया है। बहुत दिनों से 'दीनियात' के ऐसे तर्जमे की ज़रूरत महसूस क जा रही थी जो उर्दू न जाननेवाले मुस्लिम नौजवानों की ज़बान को साम रखकर तैयार किया जाए। यह पेशकश इसी ज़रूरत को पूरा करने की एक कोशिश है।

मैंने तर्जमे के बजाय रस्मुल-ख़त (लिपि) को तबदील किया है औ अस्ल किताब के मुश्किल लफ़्ज़ों को आसान बनाने की कोशिश की है। उ के वे लफ़्ज़ जो मुस्लिम नौजवान आमतौर पर जानते हैं, ज्यों-के-त्यों रह दिए गए हैं।

मुझे यक़ीन है कि उर्दू न जाननेवाले मुस्लिम नौजवान इस किताब रं भरपूर फ़ायदा उठाएँगे। इन शाअल्लाह।

—अनुवादक

(1)
इस्लाम

इस्लाम नाम क्यों?

दुनिया में जितने मज़हब हैं उनमें से हर एक का नाम या तो किसी ख़ास शख़्स के नाम पर रखा गया है या उस क़ौम के नाम पर जिसमें वह मज़हब पैदा हुआ। मिसाल के तौर पर ईसाई मज़हब का नाम इसलिए ईसाइयत है कि उसकी निसबत हज़रत ईसा (अलैहिस्सलाम) की तरफ़ है। बौद्धमत का नाम इसलिए बौद्धमत है, क्योंकि उसके बानी महात्मा बुद्ध थे। ज़रदुश्ती मज़हब का नाम अपने बानी ज़रदुश्त के नाम पर है। यहूदी मज़हब एक ख़ास क़बीले में पैदा हुआ जिसका नाम यहूदाह था। ऐसा ही हाल दूसरे मज़हबों के नामों का भी है। मगर इस्लाम की ख़ुसूसियत यह है कि वह किसी शख़्स या क़ौम की तरफ़ मन्सूब नहीं है, बल्कि उसका नाम एक ख़ास सिफ़त को ज़ाहिर करता है, जो 'इस्लाम' लफ़्ज़ के मानी में पाई जाती है। यह नाम ख़ुद ज़ाहिर करता है कि यह किसी एक शख़्स की ईजाद नहीं है, न यह किसी एक क़ौम के साथ मख़सूस है। इसका ताल्लुक़ किसी शख़्स या मुल्क या क़ौम से नहीं है। सिर्फ़ 'इस्लाम' की सिफ़त लोगों में पैदा करना इसका मक़सद है। हर ज़माने और हर क़ौम के जिन सच्चे और नेक लोगों में यह सिफ़त पाई गई वे सब 'मुस्लिम' थे, मुस्लिम हैं और आइन्दा भी होंगे।

लफ़्ज़ इस्लाम के मानी

अरबी ज़बान में इस्लाम के मानी इताअत (हुक्म मानना) और फ़रमाँबरदारी के हैं। इस्लाम मज़हब का नाम 'इस्लाम' इसलिए रखा गया है कि यह अल्लाह की इताअत और फ़रमाँबरदारी है।[1]

1. 'इस्लाम' लफ़्ज़ का एक दूसरा मतलब है अम्न, सलामती, पनाह देना वग़ैरह। आदमी को अस्ल अम्न और सलामती उसी वक़्त मिलती है जब वह अपने को अल्लाह का फ़रमाँबरदार बना ले और उसी के हुक्मों के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारे। ऐसी ही ज़िन्दगी से दिल को भी सुकून मिलता है और समाज में भी अम्न क़ायम होता है। —अनुवादक

इस्लाम की हक़ीक़त

आप देखते हैं कि दुनिया में जितनी चीज़ें हैं सब एक क़ायदे और क़ानून में जकड़ी हुई हैं। चाँद और तारे सब एक ज़बरदस्त क़ायदे में बँधे हुए हैं, जिससे वे बाल बराबर भी हट नहीं सकते। ज़मीन अपनी ख़ास रफ़्तार के साथ घूम रही है। उसके लिए जो वक़्त, रफ़्तार और रास्ता मुक़र्रर किया गया है, उसमें थोड़ा-सा फ़र्क़ नहीं आता। पानी और हवा, रौशनी और गर्मी सब एक क़ानून के पाबन्द हैं। पहाड़-पत्थर, पेड़-पौधे और हैवानात में से हर एक के लिए जो क़ानून मुक़र्रर है, उसी के मुताबिक़ सब पैदा होते हैं, बढ़ते हैं, घटते हैं, जीते हैं और मरते हैं। ख़ुद इनसान की हालत पर भी आप ग़ौर करेंगे तो आपको मालूम होगा कि वह भी क़ुदरत के क़ानून से बँधा हुआ है। जो क़ायदा उसकी पैदाइश के लिए मुक़र्रर किया गया है उसी के मुताबिक़ साँस लेता है, पानी, खाना, गर्मी और रौशनी हासिल करता है। उसके दिल की हरकत, उसके ख़ून का बहाव, उसका साँस लेना, उसी क़ानून का पाबन्द है। उसका दिमाग़, उसका मेदा, उसके फेफड़े, उसके रग-पट्ठे, उसके हाथ-पाँव, ज़बान, आँखें, कान और नाक ग़रज़ उसके जिस्म का एक-एक हिस्सा वही काम कर रहा है जो उसके लिए मुक़र्रर है, और उसी तरीक़े पर कर रहा है जो उसको बता दिया गया है।

यह ज़बरदस्त क़ानून जिसके बन्धन में बड़े-बड़े सय्यारों से लेकर ज़मीन का एक छोटे-से-छोटा ज़र्रा तक जकड़ा हुआ है, एक बड़े हाकिम का बनाया हुआ क़ानून है। सारी कायनात और कायनात की हर चीज़ उस हाकिम की फ़रमाँबरदार है, क्योंकि वे उसी के बनाए हुए क़ानून की इताअत और फ़रमाँबरदारी कर रही हैं। इस लिहाज़ से सारी कायनात का मज़हब इस्लाम है, क्योंकि हम ऊपर बयान कर चुके हैं कि ख़ुदा की इताअत और फ़रमाँबरदारी ही को इस्लाम कहते हैं। सूरज, चाँद और तारे सब मुस्लिम हैं, पेड़-पत्थर और जानवर भी मुस्लिम हैं, और वह इनसान भी, जो ख़ुदा को नहीं पहचानता और उसका इनकार करता है, उसके सिवा दूसरों को पूजता है, उसके साथ दूसरों को शरीक करता है, अपनी फ़ितरत और तबीअत के लिहाज़ से मुस्लिम ही है, क्योंकि उसका पैदा होना, ज़िन्दा रहना और मरना

ब कुछ खुदाई क़ानून ही के तहत है। उसके जिस्म के एक-एक हिस्से और क-एक रोंगटे का मज़हब इस्लाम है, क्योंकि सब ख़ुदा के क़ानून के ताबिक़ बनते हैं, बढ़ते हैं और हरकत करते हैं। यहाँ तक कि उसकी वह बान भी अस्ल में मुस्लिम है जिससे वह नादानी के साथ शिर्क और कुफ्र ; ख़यालात ज़ाहिर करता है। उसका वह सिर भी पैदाइशी मुस्लिम है, ासको वह ज़बरदस्ती खुदा के सिवा दूसरों के सामने झुकाता है। उसका ह दिल भी फ़ितरी तौर पर मुस्लिम है, जिसमें वह बेइल्मी की वजह से ख़ुदा ; सिवा दूसरों की इज़्ज़त और मुहब्बत रखता है, क्योंकि वे सब चीज़ें खुदाई ानून की फ़रमाँबरदार हैं और उनकी हर जुंबिश ख़ुदा ही के क़ानून के तहत ाती है।

अब एक दूसरे पहलू से भी देखिए—

इनसान की एक हैसियत तो यह है कि वह दूसरी मख़लूक़ की तरह ़दरत के ज़बरदस्त क़ायदों में जकड़ा हुआ है और उनकी पाबन्दी पर ाजबूर है, दूसरी हैसियत यह है कि वह अक़्ल रखता है, सोचने-समझने और ाय क़ायम करने की सलाहियत रखता है और अपने इख़्तियार से एक बात ो मानता है, दूसरी बात को नहीं मानता। एक तरीक़े को पसन्द करता है, ़सरे तरीक़े को पसन्द नहीं करता। ज़िन्दगी के मामलों में अपने इरादे से ़ुद एक ज़ाब्ता बनाता है या दूसरों के बनाए हुए ज़ाब्तों को इख़्तियार करता । इस हैसियत से वह दुनिया की दूसरी चीज़ों की तरह किसी मुक़र्रर क़ानून ा पाबन्द नहीं किया गया है, बल्कि उसको अपने ख़याल, अपनी राय और अमल में इन्तिख़ाब की आज़ादी दी गई है। इनसान की ज़िन्दगी में ये दो ैसियतें अलग-अलग पाई जाती हैं।

पहली हैसियत में वह दुनिया की तमाम दूसरी चीज़ों के साथ पैदाइशी ुस्लिम है और मुस्लिम होने पर मजबूर है, जैसा कि अभी आपको मालूम ो चुका है।

दूसरी हैसियत में मुस्लिम होना या न होना उसके इख़्तियार में है और इसी इख़्तियार की बिना पर इनसान दो गिरोहों में बँट जाता है।

एक इनसान वह है जो अपने पैदा करनेवाले को पहचानता है, उसको अपना मालिक तसलीम करता है और अपनी ज़िन्दगी के इख़्तियारी काम में भी उसके पसन्द किए हुए क़ानून की फ़रमाँबरदारी करता है। यह पूरा मुस्लिम है, इसका इस्लाम मुकम्मल हो गया, क्योंकि अब उसकी ज़िन्दगी सरासर इस्लाम है। अब वह जान-बूझकर भी उसी का फ़रमाँबरदार बन गया है, जिसकी फ़रमाँबरदारी वह बग़ैर जाने-बूझे कर रहा था। अब वह अपने इरादे से भी उसी ख़ुदा का हुक्म मान रहा है, जिसका हुक्म वह बिना इरादा किए मान रहा था। अब उसका इल्म सच्चा है, क्योंकि वह उस ख़ुदा को जान गया जिसने उसको जानने और इल्म हासिल करने की ताक़त दी है। अब उसकी अक़्ल और उसकी राय ठीक है क्योंकि उसने सोच-समझकर उस ख़ुदा की इताअत का फ़ैसला किया जिसने उसे सोचने-समझने और राय क़ायम करने की क़ाबिलियत (योग्यता) दी है। अब उसकी ज़बान सच्ची है, क्योंकि वह उसी ख़ुदा का इक़रार कर रही है जिसने उसे बोलने की ताक़त दी है। अब उसकी सारी ज़िन्दगी में सच्चाई-ही-सच्चाई है क्योंकि वह इख़्तियारी और बेइख़्तियारी दोनों हालतों में ख़ुदा के क़ानून का पाबन्द है। अब सारी कायनात से उसका ताल्लुक़ जुड़ गया, क्योंकि कायनात की सारी चीज़ें जिसकी बन्दगी कर रही हैं, उसी की बन्दगी वह भी कर रहा है। अब वह ज़मीन पर ख़ुदा का ख़लीफ़ा और नायब है। सारी दुनिया उसकी है और वह ख़ुदा का है।

कुफ़्र की हक़ीक़त

इसके मुक़ाबले में दूसरा इनसान वह है जो मुस्लिम पैदा हुआ और ज़िन्दगी-भर बेजाने-बूझे मुस्लिम ही रहा, मगर अपने इल्म और अक़्ल से काम लेकर उसने ख़ुदा को न पहचाना और अपने इख़्तियार की हद में उसने ख़ुदा की इताअत करने से इनकार कर दिया। वह शख़्स काफ़िर है। कुफ़्र के अस्ल मानी छुपाने और परदा डालने के हैं। ऐसे शख़्स को काफ़िर इसलिए कहा जाता है कि उसने अपनी फ़ितरत पर नादानी का परदा डाल रखा है। वह इस्लाम की फ़ितरत पर पैदा हुआ है। उसका सारा जिस्म और जिस्म का हर हिस्सा इस्लाम की फ़ितरत पर काम कर रहा है। उसके चारों

तरफ़ सारी दुनिया इस्लाम पर चल रही है, मगर उसकी अक्ल पर परदा पड़ गया है। तमाम दुनिया की और ख़ुद अपनी फ़ितरत उससे छुप गई है। वह उसके ख़िलाफ़ सोचता है और उसके ख़िलाफ़ चलने की कोशिश करता है।

अब आप समझ सकते हैं कि जो शख़्स काफ़िर है वह कितनी बड़ी गुमराही में पड़ा हुआ है।

कुफ़्र के नुक़सान

कुफ़्र एक जिहालत है। बल्कि अस्ली जिहालत कुफ़्र ही है। इससे बढ़कर और क्या जिहालत हो सकती है कि इनसान ख़ुदा को न जानता हो। एक शख़्स कायनात के इतने बड़े कारख़ाने को रात-दिन चलते हुए देखता है, मगर नहीं जानता कि इस कारख़ाने को बनानेवाला और चलानेवाला कौन है। वह कौन कारीगर है जिसने कोयले और लोहे और कैल्शियम और सोडियम और ऐसी ही कुछ चीज़ों को मिलाकर इनसान जैसी लाजवाब मख़लूक़ पैदा कर दी। एक शख़्स दुनिया में हर तरफ़ ऐसी चीज़ें और ऐसे काम देखता है, जिनमें बेमिसाल इंजीनियरी, हिसाबदानी, कीमियादानी और सारी दानाइयों के कमाल नज़र आते हैं, मगर वह नहीं जानता कि वह इल्म और हिकमत और अक़्लवाली हस्ती कौन-सी है, जिसने कायनात में ये सारे काम किए हैं। सोचिए और ग़ौर कीजिए ऐसे शख़्स के लिए सही इल्म के दरवाज़े कैसे खुल सकते हैं, जिसको इल्म का पहला सिरा ही न मिला हो? चाहे वह कितना ही सोच-विचार करे और कितनी ही तलाश और जुस्तजू में सिर खपाए, उसको ज़िन्दगी के किसी मैदान में इल्म का सीधा और यक़ीनी रास्ता न मिलेगा, क्योंकि उसको शुरू में भी जिहालत का अंधेरा नज़र आएगा और आख़िर में भी वह अंधेरे के सिवा कुछ न देखेगा।

कुफ़्र एक ज़ुल्म है बल्कि सबसे बड़ा ज़ुल्म कुफ़्र ही है। आप जानते हैं कि ज़ुल्म किसे कहते हैं? ज़ुल्म यह है कि किसी चीज़ से उसकी तबीअत और फ़ितरत के ख़िलाफ़ ज़बरदस्ती काम लिया जाए। आपको मालूम हो चुका है कि दुनिया में जितनी चीज़ें हैं सब अल्लाह के हुक्म की पाबन्द हैं और उनकी फ़ितरत ही इस्लाम यानी ख़ुदा के क़ानून की इताअत है। ख़ुद

इनसान का पूरा जिस्म और उसका हर हिस्सा इसी फ़ितरत पर पैदा हुआ है। ख़ुदा ने इन चीज़ों पर इनसान को हुकूमत करने का थोड़ा-सा इख़्तियार तो ज़रूर दिया है, मगर हर चीज़ की फ़ितरत यह चाहती है कि उससे ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ काम लिया जाए, लेकिन जो शख़्स कुफ़्र करता है वह इन सब चीज़ों से उनकी फ़ितरत के ख़िलाफ़ काम लेता है, वह अपने दिल में दूसरों की बड़ाई, मुहब्बत और डर के बुत बिठाता है, हालाँकि दिल की फ़ितरत यह चाहती है कि उसमें ख़ुदा की बड़ाई, मुहब्बत और डर हो। वह अपने तमाम जिस्मानी हिस्सों से और दुनिया की उन सब चीज़ों से जो उसके इख़्तियार में हैं, ख़ुदा की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ काम लेता है, हालाँकि हर चीज़ की तबीअत यह चाहती है कि उससे ख़ुदा के क़ानून के मुताबिक़ काम लिया जाए। बताइए ऐसे शख़्स से बढ़कर कौन ज़ालिम होगा जो अपनी ज़िन्दगी में हर वक़्त हर चीज़ पर यहाँ तक कि ख़ुद अपने-आपपर भी ज़ुल्म करता रहे।

कुफ़्र सिर्फ़ ज़ुल्म ही नहीं, बग़ावत और नाशुक्री और नमक-हरामी भी है। ज़रा सोचिए, इनसान के पास ख़ुद अपनी क्या चीज़ है? अपने दिमाग़ को उसने बनाया या ख़ुदा ने? अपने दिल, अपनी आँखों और अपनी ज़ुबान और अपने हाथ-पाँव और अपने तमाम जिस्मानी हिस्सों को बनानेवाला वह ख़ुद है या ख़ुदा? उसके आसपास जो चीज़ें हैं उनको पैदा करनेवाला ख़ुद इनसान है या ख़ुदा? इन सब चीज़ों को इनसान के लिए फ़ायदेमन्द और कारआमद बनाना और इनसान को उनके इस्तेमाल की ताक़त देना इनसान का अपना काम है या ख़ुदा का? आप कहेंगे कि ये सब चीज़ें ख़ुदा की हैं, ख़ुदा ही ने इनको पैदा किया है, ख़ुदा ही इनका मालिक है और ख़ुदा ही के देने से ये इनसान को हासिल हुई हैं। जब अस्ल हक़ीक़त यह है तो उससे बड़ा बाग़ी कौन होगा जो ख़ुदा के दिए हुए दिमाग़ से ख़ुदा ही के ख़िलाफ़ सोचने की ख़िदमत ले? ख़ुदा के दिए हुए दिल में ख़ुदा ही के ख़िलाफ़ ख़यालात रखे? ख़ुदा ने जो आँखें, जो ज़बान, जो हाथ-पाँव और जो दूसरी चीज़ें उसे दी हैं उनको ख़ुदा ही की पसन्द और उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ इस्तेमाल करे? अगर कोई नौकर अपने मालिक का नमक खाकर उससे

बेवफ़ाई करता है तो आप उसे नमक-हराम कहते हैं। अगर कोई अफ़सर हुकूमत के दिए हुए इख़्तियार को ख़ुद हुकूमत ही के ख़िलाफ़ इस्तेमाल करता है तो आप उसे बाग़ी कहते हैं। अगर कोई अपने मुहसिन (एहसान करनेवाले) से दग़ा करता है तो आप उसे एहसान फ़रामोश कहते हैं, लेकिन इनसान के मुक़ाबले में इनसान की नमक-हरामी, ग़द्दारी और एहसान फ़रामोशी की क्या हक़ीक़त? इनसान, इनसान को कहाँ से रोज़ी देता है? वह रोज़ी ख़ुदा की ही दी हुई है, हुकूमत अपने मुलाज़िमों को जो इख़्तियार देती है, वे कहाँ से आए हैं? ख़ुदा ही ने तो उसको हुकूमत करने की ताक़त दी है। कोई एहसान करनेवाला दूसरों पर कहाँ से एहसान करता है? सब कुछ ख़ुदा का ही दिया हुआ है। इनसान पर सबसे बड़ा हक़ उसके माँ-बाप का है, मगर माँ-बाप के दिल में औलाद की मुहब्बत किसने पैदा की? माँ के सीने में दूध किसने उतारा? बाप के दिल में यह बात किसने डाली कि अपने गाढ़े-पसीने की कमाई गोश्त-पोश्त के एक बेकार लोथड़े पर ख़ुशी-ख़ुशी लुटा दे और उसके पालने और तालीमो-तरबियत में अपना वक़्त, अपना माल, अपना आराम-चैन सब कुछ क़ुरबान कर दे। अब बताइए कि जो ख़ुदा इनसान का अस्ली मुहसिन है, हक़ीक़ी बादशाह है, सबसे बड़ा परवरदिगार है, अगर उसी के साथ इनसान कुफ़्र करे, उसको ख़ुदा न माने, उसकी बन्दगी से इनकार करे और उसकी इबादत से मुँह मोड़े तो यह कैसी सख़्त बग़ावत है, कितनी बड़ी एहसान फ़रामोशी और नमक-हरामी है।

कहीं यह न समझ लीजिए कि कुफ़्र से इनसान ख़ुदा का कुछ बिगाड़ता है। जिस बादशाह की सल्तनत इतनी बड़ी है कि हम बड़ी-से-बड़ी दूरबीन लगाकर भी अब तक यह मालूम न कर सके कि वह कहाँ से शुरू होती है और कहाँ ख़त्म होती है, जिस बादशाह की ताक़त इतनी ज़बरदस्त है कि हमारी ज़मीन और सूरज और मिर्रीख़ और ऐसे करोड़ों सय्यारे उसके इशारों पर गेंद की तरह फिर रहे हैं, जिस बादशाह की दौलत इतनी ज़्यादा है कि सारी कायनात में जो कुछ है, उसी का है, जिसमें कोई हिस्सेदार नहीं, जो बादशाह ऐसा बेनियाज़ है कि सब उसके मुहताज हैं, भला इनसान की क्या हस्ती कि उसके मानने या न मानने से ऐसे बादशाह को कोई नुक़सान हो!

उससे कुफ़्र और सरकशी करके इनसान उसका कुछ नहीं बिगाड़ता, हाँ खुद अपनी तबाही का सामान करता है।

कुफ़्र और नाफ़रमानी का लाज़िमी नतीजा यह है कि इनसान हमेशा के लिए नाकाम और नामुराद हो जाए। ऐसे शख़्स को इल्म का सीधा रास्ता कभी न मिल सकेगा, क्योंकि जो इल्म खुद अपने पैदा करनेवाले को न जाने वह किस चीज़ को सही जान सकता है? उसकी अक़्ल हमेशा टेढ़े रास्ते पर चलेगी, क्योंकि जो अक़्ल खुद अपने बनानेवाले के पहचानने में ग़लती करे वह और किस चीज़ को सही समझ सकती है! वह अपनी ज़िन्दगी के सारे मामलों में ठोकरों-पर-ठोकरें खाएगा, उसके अख़लाक़ ख़राब होंगे, उसका तमद्दुन ख़राब होगा, उसकी समाजी ज़िन्दगी ख़राब होगी, उसकी मईशत (माली हालत), ख़राब होगी, उसकी हुकूमत और सियासत ख़राब होगी। वह दुनिया में बदअमनी फैलाएगा, ख़ून-ख़राबा करेगा, दूसरों का हक़ छीनेगा, ज़ुल्म-सितम करेगा, खुद अपनी ज़िन्दगी को बुरे ख़यालात और अपनी शरारत और बदआमाली से अपने लिए दूभर कर लेगा। फिर जब वह इस दुनिया से गुज़रकर आख़िरत की दुनिया में पहुँचेगा तो वे सब चीज़ें जिन पर वह तमाम उम्र ज़ुल्म करता रहा था, उसके ख़िलाफ़ नालिश (शिकायत) करेंगी। उसका दिमाग़, उसका दिल, उसकी आँखें, उसके कान, उसके हाथ-पाँव ग़रज़ उसका रोंगटा-रोंगटा ख़ुदा की अदालत में फ़रियाद करेगा कि इस ज़ालिम ने तेरे ख़िलाफ़ बग़ावत की और इस बग़ावत में हमसे ज़बरदस्ती काम लिया। वह ज़मीन जिस पर नाफ़रमानी के साथ चला और बसा, वह रोज़ी जिसको उसने नाजाइज़ तरीक़ों से कमाया, और वह दौलत जो हराम से आई और हराम पर ख़र्च की गई, वे सब चीज़ें जिन्हें उसने बाग़ी बनकर ग़लत तौर पर इस्तेमाल किया, वे सब आलात और सामान जिनसे उसने इस बग़ावत में काम लिया, उसके मुक़ाबले में फ़रियादी बनकर आएँगी और ख़ुदा जो हक़ीक़ी मुनसिफ़ है, इन मज़लूमों की दादरसी में इस बाग़ी को ज़िल्लत की सज़ा देगा।

इस्लाम के फ़ायदे

ये हैं कुफ़्र के नुक़सान। आइए अब एक नज़र यह भी देखिए कि

स्लाम का तरीक़ा अपनाने में क्या फ़ायदे हैं।

ऊपर आपको मालूम हो चुका है कि इस जहान में हर तरफ़ ख़ुदा की ख़ुदाई की निशानियाँ फैली हुई हैं। कायनात का यह बहुत बड़ा कारख़ाना जो एक मुकम्मल निज़ाम और अटल क़ानून के तहत चल रहा है ख़ुद इस बात पर गवाह है कि इसका बनाने और चलानेवाला एक ज़बरदस्त फ़रमाँरवा है, जिसकी हुकूमत के ख़िलाफ़ कोई सिर नहीं उठा सकता। तमाम कायनात की तरह ख़ुद इनसान की फ़ितरत भी यही है कि उसका हुक्म माने। इसलिए बेसमझे वह रात-दिन उसकी इताअत कर भी रही है, क्योंकि उसके क़ुदरत के क़ानून की ख़िलाफ़वर्ज़ी करके इनसान ज़िन्दा नहीं रह सकता।

लेकिन ख़ुदा ने इनसान को इल्म की क़ाबिलियत, सोचने और समझने की ताक़त और भले-बुरे की तमीज़ देकर, इरादे और इख़्तियार में थोड़ी-सी आज़ादी दे दी है। इस आज़ादी में दरअस्ल इनसान का इम्तिहान है, उसके इल्म का इम्तिहान है, उसकी अक़्ल का इम्तिहान है, उसकी तमीज़ का इम्तिहान है और इस बात का इम्तिहान है कि उसे जो आज़ादी दी गई है उसको वह किस तरह इस्तेमाल करता है और इस इम्तिहान में कोई एक तरीक़ा अपनाने पर मजबूर नहीं किया गया है, क्योंकि मजबूर करने से इम्तिहान का मक़सद ही ख़त्म हो जाता है। आप समझ सकते हैं कि इम्तिहान में सवालात का परचा देने के बाद अगर आपको एक ख़ास जवाब देने पर मजबूर कर दिया जाए तो ऐसे इम्तिहान से कोई फ़ायदा नहीं होगा। आपकी अस्ल क़ाबिलियत तो उसी वक़्त खुलेगी जब आपको हर तरह का जवाब देने का इख़्तियार हासिल हो। अगर आपने सही जवाब दिया तो कामयाब होंगे और आइन्दा तरक़्क़ी का दरवाज़ा आपके लिए खुल जाएगा, और अगर ग़लत जवाब दिया तो नाकाम होंगे, और अपनी नाक़ाबिलियत से ख़ुद ही तरक़्क़ी का रास्ता रोक लेंगे। बिलकुल इसी तरह अल्लाह तआला ने भी इनसान को आज़ाद रखा है कि जो तरीक़ा चाहे इख़्तियार करे।

अब एक शख़्स तो वह है जो अपनी और कायनात की फ़ितरत को नहीं समझता, अपने ख़ालिक़ की ज़ात और सिफ़ात को पहचानने में ग़लती करता है और इख़्तियार की जो आज़ादी उसे दी गई है उससे फ़ायदा उठाकर

नाफ़रमानी और सरकशी का तरीक़ा इख़्तियार करता है। यह शख़्स इल्म और अक़्ल और तमीज़ और फ़र्ज़शनासी के इम्तिहान में नाकाम हो गया। उसने खुद साबित कर दिया कि वह हर हैसियत से मामूली दर्जे का आदमी है। लिहाज़ा उसका वही अंजाम होना चाहिए जो आपने ऊपर देख लिया।

इसके मुक़ाबले में एक दूसरा शख़्स है जो इम्तिहान में कामयाब हो गया। उसने इल्म और अक़्ल से सही काम लेकर खुदा को जाना और माना हालाँकि वह ऐसा करने पर मजबूर नहीं किया गया था। उसने भले और बुरे की तमीज़ में भी ग़लती न की और अपने आज़ाद इन्तिख़ाब से नेकी को पसन्द किया, हालाँकि वह बदी की तरफ़ भी माइल होने का इख़्तियार रखता था। उसने फ़ितरत को समझा, अपने खुदा को पहचाना और नाफ़रमानी का इख़्तियार रखने के बावजूद खुदा की फ़रमाँबरदारी ही इख़्तियार की। उस शख़्स को इम्तिहान में इसी वजह से तो कामयाबी मिली कि उसने अपनी अक़्ल से ठीक काम लिया, आँखों से ठीक देखा, कानों से ठीक सुना, दिमाग़ से ठीक राय क़ायम की और दिल से उसी बात की पैरवी का फ़ैसला किया जो ठीक था। उसने हक़ को पहचानकर यह भी साबित कर दिया कि वह हक़-शनास है और हक़ के आगे सिर झुकाकर यह भी दिखा दिया कि वह हक़परस्त है।

ज़ाहिर है कि जिस शख़्स में ये सिफ़तें मौजूद हों उसको दुनिया और आख़िरत दोनों में कामयाब होना ही चाहिए।

वह इल्म और अमल के हर मैदान में सही रास्ता इख़्तियार करेगा इसलिए कि जो शख़्स खुदा की ज़ात को जानता है और उसकी सिफ़ात को पहचानता है, वह अस्ल में इल्म की इब्तिदा को भी जानता है और उसकी इन्तिहा को भी। ऐसा शख़्स कभी ग़लत रास्तों में भटक ही नहीं सकता। उसका पहला क़दम भी सही पड़ा है और जिस आख़िरी मंज़िल पर उसे जाना है उसको भी वह यक़ीन के साथ जानता है। अब वह फ़लसफ़ियाना सोच-विचार से कायनात के भेदों को समझने की कोशिश करेगा, मगर एक काफ़िर फ़लसफ़ी की तरह कभी शक और शुबहा की भूल-भुलैयों में गुम न होगा। वह साइंस के ज़रिए से क़ुदरत के क़ानून मालूम करने की कोशिश करेगा

ायनात के छुपे हुए ख़ज़ानों को निकालेगा, खुदा ने जो ताक़तें दुनिया में ौर खुद इनसानों के वजूद में पैदा की हैं, इन सब को ढूँढ-ढूँढकर मालूम ोरेगा, ज़मीन और आसमान में जितनी चीज़ें हैं, उन सबसे काम लेने के हतर-से-बेहतर तरीक़े खोजेगा, मगर खुदा-शनासी हर मौक़े पर उसको ाइंस का ग़लत इस्तेमाल करने से रोकेगी। वह कभी इस ग़लतफ़हमी में न ड़ेगा कि मैं इन चीज़ों का मालिक हूँ, मैंने फ़ितरत पर फ़तह पा ली है, मैं ापने फ़ायदे के लिए साइंस की मदद लूँगा, दुनिया को उलट-पलट कर दूँगा। ूट-मार, ख़ून-ख़राबा करके अपनी ताक़त का सिक्का सारे जहान में बिठा ंगा। यह एक काफ़िर साइंटिस्ट का काम है। मुस्लिम साइंटिस्ट जितनी यादा साइंस में महारत हासिल करेगा, उतना ही ज़्यादा खुदा पर उसका ाक़ीन बढ़ेगा और उतना ही ज़्यादा वह खुदा का शुक्रगुज़ार बन्दा बनेगा। ासका अक़ीदा यह होगा कि मेरे मालिक ने मेरी ताक़त और मेरे इल्म में जो ज़ाफ़ा किया है उससे मैं अपनी और तमाम इनसानों की भलाई के लिए कोशिश करूँगा और यही उसका सही शुक्रिया है।

इसी तरह तारीख़; मआशियात[1], सियासत, क़ानून और दूसरे इल्म और फ़न में भी एक मुस्लिम अपनी तहक़ीक़ और कोशिश के लिहाज़ से एक काफ़िर के मुक़ाबले में कम न रहेगा, मगर दोनों की नज़र में बड़ा फ़र्क़ होगा। मुस्लिम हर इल्म का मुताला सही नज़र से करेगा, सही मक़सद के लिए करेगा और सही नतीजे पर पहुँचेगा। तारीख़ में वह इनसान के पिछले तजरिबों से ठीक-ठीक सबक़ लेगा, क़ौमों के ऊँचे उठने और नीचे गिरने के सही सबब मालूम करेगा, उनकी तहज़ीब और कल्चर की मुफ़ीद चीज़ें मालूम करेगा, उनके नेक दिल लोगों के हालात से फ़ायदा उठाएगा और उन सब चीज़ों से बचेगा जिनकी वजह से पिछली क़ौमें तबाह हो गईं। मआशियात में दौलत कमाने और ख़र्च करने के ऐसे तरीक़े मालूम करेगा जिनसे तमाम इनसानों का भला हो, न यह कि एक का फ़ायदा और बहुतों का नुक़सान हो। सियासत में उसकी सारी तवज्जोह इस तरफ़ लगी होगी कि दुनिया में अम्न,

1. अर्थशास्त्र—यानी कमाने, ख़र्च करने और लेन-देन वग़ैरह का इल्म।

इनसाफ़, नेकी और शराफ़त की हुकूमत हो। कोई शख़्स या जमाअत खुद के बन्दों को अपना बन्दा न बनाए। हुकूमत और उसकी तमाम ताक़तों क खुदा की अमानत समझा जाए और खुदा के बन्दों की बेहतरी के लि इस्तेमाल किया जाए। क़ानून में वह इस नज़र से ग़ौर करेगा कि इनसाफ़ के साथ लोगों के हक़ मुक़र्रर किए जाएँ और किसी सूरत से किसी पर ज़ुल न होने पाए।

मुस्लिम के अख़लाक़ में खुदातरसी, हक़-शनासी और रास्तबाज़ी होगी वह दुनिया में यह समझकर रहेगा कि सब चीज़ों का मालिक खुदा है। मे पास और सब इनसानों के पास जो कुछ है खुदा ही का दिया हुआ है। किसी चीज़ का यहाँ तक कि खुद अपने जिस्म और जिस्मानी ताक़तों क भी मालिक नहीं हूँ। सब कुछ खुदा की अमानत है और उस अमानत के इस्तेमाल करने का जो इख़्तियार मुझे दिया गया है उसको खुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ इस्तेमाल करना चाहिए। एक दिन खुदा मुझसे यह अमानत वापस लेगा और उस वक़्त मुझको एक-एक चीज़ का हिसाब देना होगा।

यह समझकर जो शख़्स दुनिया में रहे उसके अख़लाक़ का अन्दाज़ कीजिए। वह अपने दिल को बुरे ख़यालात से पाक रखेगा। वह अपने दिमाग़ को बुराई की फ़िक्र से बचाएगा, वह अपनी आँखों को बुरी निगाह से रोकेगा वह अपने कानों को बुराई सुनने से अलग रखेगा, वह अपनी ज़बान की हिफ़ाज़त करेगा, ताकि उससे हक़ के ख़िलाफ़ कोई बात न निकले, वह अपने पेट को हराम रोज़ी से भरने के बजाय भूखा रहना ज़्यादा पसन्द करेगा, वह अपने हाथों को ज़ुल्म के लिए कभी न उठाएगा, वह अपने पाँव को बुराई के रास्ते पर कभी न चलाएगा, वह अपने सिर को बातिल के सामने कभी न झुकाएगा चाहे वह काट ही क्यों न डाला जाए, वह अपनी किसी ख़्वाहिश और किसी ज़रूरत को ज़ुल्म और नाहक़ के रास्ते से कभी पूरा न करेगा वह नेकी और शराफ़त का पुतला होगा, हक़ और सच्चाई को हर चीज़ से ज़्यादा प्यारी रखेगा और इसके लिए अपनी ज़ात के हर फ़ायदे और अपने दिल की हर ख़्वाहिश को बल्कि अपनी ज़ात को भी क़ुरबान कर देगा। वह ज़ुल्म और नाहक़ को हर चीज़ से ज़्यादा नापसन्द करेगा और किसी नुक़सान

क डर या किसी फ़ायदे के लालच में उसका साथ देने को तैयार न होगा। दुनिया की कामियाबी भी ऐसे ही शख़्स को मिलती है।

उससे बढ़कर दुनिया में कोई इज़्ज़तवाला और शरीफ़ न होगा क्योंकि उसका सिर खुदा के सिवा किसी के सामने झुकनेवाला नहीं, और उसका हाथ खुदा के सिवा किसी के आगे फैलनेवाला नहीं। ज़िल्लत ऐसे शख़्स के पास कैसे फटक सकती है!

उससे बढ़कर दुनिया में कोई ताक़तवर भी न होगा। क्योंकि उसके दिल में खुदा के सिवा किसी का डर नहीं और उसको खुदा के सिवा किसी से बख़्शिश और इनाम का लालच भी नहीं। कौन-सी ताक़त है जो ऐसे शख़्स को हक़ और सच्चाई से हटा सकती हो, और कौन-सी दौलत है जो उसका ईमान ख़रीद सकती हो!

उससे बढ़कर दुनिया में कोई ग़नी और दौलतमन्द भी न होगा क्योंकि वह ऐशपरस्त नहीं, नफ़्स की ख़ाहिशों का बन्दा नहीं, हरीस और लालची नहीं, अपनी जाइज़ मेहनत से जो कुछ कमाता है उसी पर राज़ी रहता है और नाजाइज़ दौलत के ढेर भी अगर उसके सामने लगा दिए जाएँ तो उसको नफ़रत से ठुकरा देता है। यह इत्मीनान की दौलत है जिससे बड़ी कोई दौलत इनसान के लिए नहीं हो सकती।

उससे बढ़कर दुनिया में कोई महबूब और हर दिल अज़ीज़ भी न होगा, क्योंकि वह हर एक का हक़ अदा करेगा और किसी का हक़ न मारेगा। हर एक से नेकी करेगा और किसी के साथ बुराई न करेगा, बल्कि हर एक की भलाई के लिए कोशिश करेगा, और उसके बदले में अपने लिए कुछ न चाहेगा। लोगों के दिल आप-से-आप उसकी तरफ़ खिचेंगे। और हर शख़्स उसी इज़्ज़त और मुहब्बत करने पर मजबूर होगा।

उससे बढ़कर दुनिया में किसी का एतिबार भी न होगा क्योंकि वह अमानत में ख़ियानत न करेगा, सच्चाई से मुँह न मोड़ेगा, वादे का सच्चा और मामले का खरा होगा और हर काम में यह समझकर ईमानदारी बरतेगा कि कोई देखनेवाला हो या न हो मगर खुदा तो सब कुछ देख रहा है। ऐसे शख़्स

की साख का क्या पूछना! कौन है जो उसपर भरोसा न करेगा!!

एक मुस्लिम की सीरत को अच्छी तरह समझ लीजिए तो आपक यक़ीन आ जाएगा कि मुस्लिम कभी दुनिया में ज़लील, महकूम और नीच होकर नहीं रह सकता, वह हमेशा ग़ालिब और हाकिम ही रहेगा, क्योंवि इस्लाम उसमें ऐसी सिफ़तें पैदा करता है कि उसपर कोई ताक़त ग़ालिब नह आ सकती।

इस तरह दुनिया में इज़्ज़त के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने के बाद जब व अपने ख़ुदा के सामने हाज़िर होगा तो उसपर ख़ुदा अपनी नेमतों और रहमत की बारिश करेगा क्योंकि जो अमानत उसे सौंपी गई थी उसका पूरा-पूरा हव उसने अदा कर दिया और जिस इम्तिहान में ख़ुदा ने उसको डाला था उस वह पूरे नम्बरों के साथ कामयाब हुआ। यह हमेशा रहनेवाली कामयाबी जो दुनिया से लेकर आख़िरत तक बराबर चलती जाती है और कहीं इसक सिलसिला ख़त्म नहीं होता।

यह इस्लाम है, इनसान का फ़ितरी मज़हब। यह किसी क़ौम और मुल्व के साथ ख़ास नहीं। हर ज़माने और हर क़ौम और हर मुल्क में जो ख़ुदा व पहचाननेवाले और हक़पसन्द लोग गुज़रे हैं उन सबका यही मज़हब था। सब मुस्लिम थे, चाहे उनकी ज़बान में उस मज़हब का नाम इस्लाम हो य कुछ और।

(2)
ईमान और इताअत

इताअत के लिए इल्म और यक़ीन की ज़रूरत

पिछले सफ़हात में आपको मालूम हो चुका है कि इस्लाम अस्ल में, परवरदिगार की इताअत का नाम है। अब हम बताना चाहते हैं कि इनसान अल्लाह तआला की इताअत उस वक़्त तक नहीं कर सकता, जब तक उसे कुछ बातों का इल्म न हो और वह इल्म यक़ीन की हद तक पहुँचा हुआ न हो।

सबसे पहले तो इनसान को खुदा की हस्ती का पूरा यक़ीन होना चाहिए, क्योंकि अगर उसे यही यक़ीन न हो कि ख़ुदा है, तो वह उसकी इताअत कैसे करेगा! इसके साथ ख़ुदा की सिफ़ात का इल्म भी ज़रूरी है। जिस शख़्स को यह मालूम न हो कि ख़ुदा एक है और ख़ुदाई में उसका कोई शरीक नहीं, वह दूसरों के सामने सिर झुकाने और हाथ फैलाने से कैसे बच सकता है! जिस शख़्स को इस बात का यक़ीन न हो कि ख़ुदा सब कुछ देखने और सुननेवाला है और हर चीज़ की ख़बर रखता है, वह अपने-आपको ख़ुदा की नाफ़रमानी से कैसे रोक सकता है! इस बात पर जब आप ग़ौर करेंगे तो आपको मालूम होगा कि ख़यालात और अख़लाक़ और आमाल में इस्लाम के रास्ते पर चलने के लिए इनसान में जिन सिफ़तों का होना ज़रूरी है वे सिफ़तें उस वक़्त तक उसमें पैदा नहीं हो सकतीं, जब तक कि उसको ख़ुदा की सिफ़ात का ठीक-ठीक इल्म न हो और यह इल्म भी सिर्फ़ जान लेने की हद तक न रहे बल्कि उसको यक़ीन के साथ दिल में बैठ जाना चाहिए, ताकि इनसान का दिल उसके मुख़ालिफ़ ख़यालात से और उसकी ज़िन्दगी उसके इल्म के ख़िलाफ़ अमल करने से बच सके।

इसके बाद इनसान को यह भी मालूम होना चाहिए कि ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारने का सही तरीक़ा क्या है। किस बात को ख़ुदा

पसन्द करता है, ताकि उसको अपनाया जाए और किस बात को खुद नापसन्द करता है ताकि उससे बचा जाए। इसके लिए ज़रूरी है कि इनसान को खुदा के क़ानून की पूरी जानकारी हो। उसके बारे में वह पूरा यक़ीन रखता हो कि यही खुदा का क़ानून है और इसकी पैरवी से खुदा की खुशनूदी हासिल हो सकती है, क्योंकि अगर उसके पास सिरे से इल्म ही न हो तो वह इताअत किस चीज़ की करेगा? और अगर इल्म तो हो लेकिन पूरा यक़ीन न हो या दिल में यह ख़याल हो कि इस क़ानून और ज़ाब्ते के सिवा दूसरा क़ानून और ज़ाब्ता भी सही हो सकता है तो वह उसकी ठीक-ठीक पाबन्दी कैसे कर सकता है?

फिर इनसान को यह भी मालूम होना चाहिए कि खुदा की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ चलने और उसके पसन्द किए हुए तरीक़े की इताअत न करने का अंजाम क्या है और उसकी फ़रमाँबरदारी का इनाम क्या है? इसके लिए ज़रूरी है कि उसे आख़िरत की ज़िन्दगी का, खुदा की अदालत में पेश होने का, नाफ़रमानी की सज़ा का और फ़रमाँबरदारी पर इनाम पाने का पूरा इल्म और यक़ीन हो। जो शख़्स आख़िरत की ज़िन्दगी से वाक़िफ़ न हो वह इताअत और नाफ़रमानी दोनों को बेनतीजा समझता है। उसका ख़याल तो यह है कि आख़िर में इताअत करनेवाले और न करनेवाले दोनों बराबर रहेंगे क्योंकि दोनों मिट्टी में मिल जाएँगे, फिर उससे कैसे उम्मीद की जा सकती है कि वह इताअत की पाबन्दियाँ और तकलीफ़ें बरदाश्त करना क़बूल कर लेगा, और उन गुनाहों से बचेगा जिनसे इस दुनिया में कोई नुक़सान पहुँचने का उसको डर नहीं है! ऐसे अक़ीदे के साथ इनसान खुदाई क़ानून की कभी इताअत नहीं कर सकता। इसी तरह वह शख़्स भी इताअत में साबित क़दम नहीं हो सकता जिसे आख़िरत की ज़िन्दगी और खुदा की अदालत में पेशी का इल्म तो है, मगर यक़ीन नहीं। इसलिए कि शक और शुबहों के साथ इनसान किसी बात पर जम नहीं सकता। आप एक काम को दिल लगाकर उसी वक़्त कर सकते हैं, जब आपको यक़ीन हो कि वह काम फ़ायदेवाला है, और दूसरे काम से बचने में उसी वक़्त अटल रह सकते हैं जब आपको पूरा यक़ीन हो कि यह काम नुक़सान पहुँचानेवाला है। मालूम हुआ कि एक

रीक़े की पैरवी के लिए उसके अंजाम और नतीजे का इल्म होना भी ज़रूरी , और यह इल्म ऐसा होना चाहिए जो यक़ीन की हद तक पहुँचा हुआ हो।

ईमान' का मतलब

ऊपर के बयान में जिस चीज़ को हमने 'इल्म और यक़ीन' कहा है, सी का नाम 'ईमान' है। ईमान के मानी जानने और मानने के हैं। जो ख़ुदा ; एक होने और उसकी हक़ीक़ी सिफ़ात और उसके क़ानून और उसकी ाज़ा-सज़ा को जानता हो और दिल से उसपर यक़ीन रखता हो उसको ोमिन (ईमान रखनेवाला) कहते हैं। और ईमान का नतीजा यह है कि नसान 'मुस्लिम' यानी ख़ुदा का फ़रमाँबरदार हो जाता है।

ईमान की इस तारीफ़ से आप ख़ुद समझ सकते हैं कि ईमान के बग़ैर ोई इनसान मुस्लिम नहीं हो सकता। इस्लाम और ईमान का ताल्लुक़ वही ; जो पेड़ और बीज में होता है। बीज के बग़ैर तो पेड़ पैदा ही नहीं होता। ाँ, ऐसा हो सकता है कि बीज ज़मीन में बोया जाए मगर ज़मीन ख़राब होने ी वजह से पेड़ नाक़िस निकले। बिलकुल इसी तरह अगर कोई शख़्स सिरे े ईमान ही न रखता हो तो यह किसी तरह मुमकिन नहीं कि वह 'मुस्लिम' ो। हाँ, यह ज़रूर हो सकता है कि किसी शख़्स के दिल में ईमान हो मगर अपने इरादे की कमज़ोरी या नाक़िस तालीम और तरबियत और बुरे साथियों के असर से वह पूरा और पक्का मुस्लिम न हो।

ईमान और इस्लाम के लिहाज़ से तमाम इनसानों के चार दर्जे हैं—

1. जो ईमान रखते हैं और उनका ईमान उन्हें ख़ुदा के हुक्मों पर पूरी तरह चलनेवाला बना देता है। जिस बात को ख़ुदा नापसन्द करता है वह उससे इस तरह बचते हैं जैसे कोई शख़्स आग को हाथ लगाने से बचता है। और जिस बात को ख़ुदा पसन्द करता है वह उसको ऐसे शौक़ से करते हैं, जैसे कोई शख़्स दौलत कमाने के लिए शौक़ से काम करता है। ये अस्ली मुसलमान हैं।

2. जो ईमान तो रखते हैं मगर उनका ईमान इतना ताक़तवर नहीं है कि उन्हें पूरी तरह ख़ुदा का फ़रमाँबरदार बना दे। ये वैसे तो कमतर दर्जे के

लोग हैं, लेकिन बहरहाल मुस्लिम हैं। ये अगर नाफ़रमानी करते हैं तो अप जुर्म के लिहाज़ से सज़ा के मुस्तहिक़ हैं, मगर उनकी हैसियत मुजरिम व है, बाग़ी की नहीं है, इसलिए कि ये बादशाह को बादशाह मानते हैं औ उसके क़ानून को क़ानून तसलीम करते हैं।

3. वे जो ईमान नहीं रखते मगर ज़ाहिर में ऐसे अमल करते हैं ज ख़ुदाई क़ानून के मुताबिक़ नज़र आते हैं, ये अस्ल में बाग़ी हैं। इनका ज़ाहि नेक अमल हक़ीक़त में ख़ुदा की इताअत और फ़रमाँबरदारी नहीं है। इसलि इसका कुछ एतिबार नहीं। उनकी मिसाल ऐसे शख़्स की-सी है जो बादशा को बादशाह नहीं मानता और उसके क़ानून को क़ानून नहीं तसलीम करता यह शख़्स अगर देखने में कोई ऐसा काम कर रहा हो जो क़ानून के ख़िलाए न हो तो आप यह नहीं कह सकते कि वह बादशाह का वफ़ादार और उसवे क़ानून पर चलनेवाला है। उसकी गिनती तो बहरहाल बाग़ियों में ही होगी

4. वे जो ईमान नहीं रखते और अमल के लिहाज़ से भी शरारती औ बदकार हैं, ये सबसे निचले दर्जे के लोग हैं, क्योंकि ये बाग़ी भी हैं औ बिगाड़ पैदा करनेवाले भी।

इनसानों की इस तक़सीम से यह बात ज़ाहिर हो जाती है कि ईमान ह पर अस्ल में इनसान की कामयाबी टिकी हुई है। इस्लाम चाहे पूरा हो य अधूरा, सिर्फ़ ईमान ही के बीज से पैदा होता है। जहाँ ईमान न होगा वह ईमान की जगह कुफ़्र होगा, जिसका मतलब है ख़ुदा से बग़ावत, चाहे व बदतर दर्जे की बग़ावत हो या कमतर दर्जे की।

इल्म हासिल होने का ज़रिआ

इताअत के लिए ईमान की ज़रूरत तो आपको मालूम हो गई। अ सवाल यह है कि ख़ुदा की सिफ़ात और उसकी पसन्द का क़ानून औ आख़िरत की ज़िन्दगी के बारे में सही इल्म और ऐसा इल्म जिस पर यक़ीन किया जा सके, किस ज़रिए से हासिल हो सकता है?

हम पहले बयान कर चुके हैं कि कायनात में हर तरफ़ ख़ुदा की कारीगर के आसार फैले हुए हैं, जो इस बात पर गवाही दे रहे हैं कि इस कारख़ा

को एक ही कारीगर ने बनाया है और वही इसको चला रहा है। इन आसार में अल्लाह तआला की तमाम सिफ़तों के जलवे नज़र आते हैं। उसकी हिक्मत, उसका इल्म, उसकी क़ुदरत, उसका रह्म, उसकी परवरदिगारी, उसका ग़ज़ब, ग़रज़ कौन-सी सिफ़त है जिसकी शान उसके कामों में ज़ाहिर नहीं है! मगर इनसान की अक़्ल और उसकी क़ाबिलियत ने इन चीज़ों को देखने और समझने में अक्सर ग़लती की है। ये सब आसार आँखों के सामने मौजूद हैं फिर भी किसी ने कहा कि ख़ुदा दो हैं, और किसी ने कहा तीन हैं, किसी ने अनगिनत ख़ुदा मान लिए। किसी ने ख़ुदाई के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और कहा, एक बारिश का ख़ुदा है, एक हवा का ख़ुदा है, एक आग का ख़ुदा है। मतलब यह कि एक-एक ताक़त के अलग-अलग ख़ुदा हैं और एक ख़ुदा उन सबका सरदार है। इस तरह ख़ुदा की ज़ात और सिफ़ात को समझने में लोगों ने बहुत धोखे खाए हैं, जिनकी तफ़सील का यहाँ मौक़ा नहीं।

आख़िरत की ज़िन्दगी के बारे में भी लोगों ने बहुत-से ग़लत ख़यालात क़ायम किए। किसी ने कहा कि इनसान मरकर मिट्टी हो जाएगा, फिर उसके बाद ज़िन्दगी नहीं। किसी ने कहा—इनसान बार-बार इसी दुनिया में जन्म लेगा और अपने आमाल की सज़ा या जज़ा पाएगा।

ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करने के लिए जिस क़ानून की पाबन्दी ज़रूरी है, उसको तो ख़ुद अपनी अक़्ल से बनाना और भी ज़्यादा मुश्किल है।

अगर इनसान बहुत सही अक़्ल रखता हो और इल्मी क़ाबिलियत भी बहुत ऊँचे दर्जे की हो, तब भी सालों के तजरिबे और सोच-विचार के बाद वह किसी हद तक उन बातों के बारे में राय क़ायम कर सकेगा और फिर भी उसको पूरा यक़ीन न होगा कि उसने पूरा-पूरा हक़ मालूम कर लिया है। वैसे इल्म और अक़्ल का पूरा इम्तिहान तो इसी तरह हो सकता था कि इनसान को बग़ैर किसी हिदायत के छोड़ दिया जाता, फिर जो लोग अपनी कोशिश और क़ाबिलियत से हक़ और सच्चाई तक पहुँच जाते वही कामयाब होते और जो न पहुँचते वे नाकाम रहते, लेकिन अल्लाह तआला ने अपने

बन्दों को ऐसे सख़्त इम्तिहान में नहीं डाला। उसने अपनी मेहरबानी से खुद इनसानों में ही ऐसे इनसान पैदा किए जिनको अपनी सिफ़ात का सही इल्म दिया। वह तरीक़ा भी बताया जिससे इनसान दुनिया में ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ार सकता है। आख़िरत की ज़िन्दगी के बारे में भी सही जानकारी दी और उनको हिदायत की कि दूसरे इनसानों को यह हुक्म पहुँचा दें, ये अल्लाह के पैग़म्बर हैं। जिस ज़रिए से अल्लाह तआला ने उनको इल्म दिया है उसका नाम 'वह्य' है और जिस किताब में उनको यह इल्म दिया गया है, उसको अल्लाह की किताब और अल्लाह का कलाम कहते हैं। अब इनसान की अक्ल और इनसान की क़ाबिलियत का इम्तिहान इसमें है कि वे पैग़म्बर की पाक ज़िन्दगी को देखने और उसकी ऊँची तालीम पर ग़ौर करने के बाद उसपर ईमान लाता है या नहीं। अगर वह हक़-शनास और हक़परस्त है तो सच्ची बात और सच्चे इनसान की तालीम को मान लेगा और इम्तिहान में कामयाब हो जाएगा और अगर उसने न माना तो इनकार का यही मतलब होगा कि उसने हक़ और सच्चाई को समझने और क़बूल करने की ताक़त खो दी है। यह इनकार उसको इम्तिहान में नाकाम कर देगा, और खुदा और उसके क़ानून और आख़िरत की ज़िन्दगी के बारे में वह कभी कोई सही इल्म हासिल न कर सकेगा।

ग़ैब पर ईमान

देखिए, जब आपको किसी चीज़ का इल्म नहीं होता तो आप इल्म रखनेवाले की तलाश करते हैं और उसकी हिदायत पर अमल करते हैं। आप बीमार होते हैं तो खुद अपना इलाज नहीं कर लेते, बल्कि डॉक्टर के पास जाते हैं और डॉक्टर का सनद याफ़्ता होना, उसका तजरिबेकार होना, उसके हाथ से बहुत-से मरीज़ों का ठीक होना, ये ऐसी बातें हैं जिनकी वजह से आप ईमान ले आते हैं कि आपके इलाज के लिए जिस क़ाबिलियत की ज़रूरत है वह उस डॉक्टर में मौजूद है। इसी ईमान की वजह से वह जिस दवा को जिस तरीक़े से इस्तेमाल करने की हिदायत देता है, उसको आप इस्तेमाल करते हैं और जिस चीज़ से परहेज़ का हुक्म देता है, उससे परहेज़ करते हैं। इसी तरह क़ानून के मामले में आप वकील पर ईमान लाते हैं और उसकी

ताअत करते हैं। तालीम के मामले में उस्ताद पर ईमान लाते हैं और वह ो कुछ आपको बताता है उसको मानते चले जाते हैं। आपको कहीं जाना ो और रास्ता मालूम न हो तो किसी जाननेवाले पर ईमान लाते हैं और जो ास्ता वह आपको बताता है उसी पर चलते हैं। इस तरह दुनिया के हर ामले में आपको जानकारी और इल्म हासिल करने के लिए किसी ाननेवाले आदमी पर ईमान लाना पड़ता है और उसकी इताअत करने पर आप मजबूर होते हैं, इसी का नाम 'ग़ैब' पर ईमान है।

ग़ैब पर ईमान के मानी हैं कि जो कुछ आपको मालूम नहीं उसका इल्म आप जाननेवाले से हासिल करें और उसपर यक़ीन कर लें। ख़ुदा की ज़ात और-सिफ़ात-से-आप वाक़िफ़ नहीं हैं। आपको यह भी मालूम नहीं कि उसके फ़रिश्ते उसके हुक्म के मातहत तमाम कायनात का काम कर रहे हैं और आपको हर तरफ़ से घेरे हुए हैं। आपको यह भी ख़बर नहीं कि ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करने का तरीक़ा क्या है? आपको आख़िरत की ज़िन्दगी का भी सही हाल मालूम नहीं। इन सब बातों का इल्म आपको एक ऐसे इनसान से हासिल होता है जिसकी सच्चाई, ख़ुदातरसी, निहायत पाक ज़िन्दगी और निहायत अक़्लमन्दी की बातों को देखकर आप तसलीम कर लेते हैं कि वह जो कुछ कहता है सच कहता है और उसकी सब बातें यक़ीन करने के क़ाबिल हैं। यही 'ग़ैब' पर ईमान है। अल्लाह तआला की इताअत और उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ अमल करने के लिए ग़ैब पर ईमान ज़रूरी है, क्योंकि पैग़म्बर के सिवा किसी और ज़रिए से आपको सही इल्म हासिल नहीं हो सकता और सही इल्म के बग़ैर आप इस्लाम के तरीक़े पर ठीक-ठीक चल नहीं सकते।

(3)

नुबूवत

पिछले बाब (अध्याय) में आपको तीन बातें बताई गई हैं—

एक यह कि ख़ुदा की इताअत के लिए ख़ुदा की ज़ात और सिफ़ात औ उसकी पसन्द के तरीक़े और आख़िरत की जज़ा और सज़ा के बारे में सह इल्म की ज़रूरत है और यह इल्म ऐसा होना चाहिए कि जिस पर आपक पूरा यक़ीन यानी ईमान हासिल हो।

दूसरी यह कि अल्लाह तआला ने इनसान को इतने सख़्त इम्तिहान नहीं डाला है कि वह ख़ुद अपनी कोशिश से यह इल्म हासिल कर ले बल्कि उसने ख़ुद इनसानों ही में से कुछ चुने हुए बन्दों (यानी पैग़म्बरों) को 'वह्य के ज़रिए से यह इल्म दिया और उनको हुक्म दिया कि दूसरे बन्दों तक इस इल्म को पहुँचा दें।

तीसरी यह कि आम इनसानों पर अब सिर्फ़ इतनी ज़िम्मेदारी है कि खुदा के सच्चे पैग़म्बरों को पहचानें। जब उनको मालूम हो जाए कि फ़ुल शख़्स हक़ीक़त में ख़ुदा का सच्चा पैग़म्बर है तो उनका फ़र्ज़ है कि जो कुछ वह तालीम दे, उसपर ईमान लाएँ, और जो कुछ वह हुक्म दे उसको तसली करें और जिस तरीक़े पर वह चले उसकी पैरवी करें।

अब सबसे पहले हम आपको यह बताना चाहते हैं कि पैग़म्बरी (नुबूवत) की हक़ीक़त क्या है और पैग़म्बरों को कैसे पहचाना जाए?

पैग़म्बरी की हक़ीक़त

आप देखते हैं कि दुनिया में इनसान को जिन-जिन चीज़ों की ज़रूरत होती है, अल्लाह ने उन सबका इन्तिज़ाम ख़ुद ही कर दिया है। बच्चा जब पैदा होता है, तो देखिए, कितना सामान देकर उसको दुनिया में भेजा जात है, देखने के लिए आँखें, सुनने के लिए कान, सूँघने और साँस लेने के लिए नाक, महसूस करने के लिए सारे जिस्म की खाल में एहसास करानेवाली

क़ुव्वत, चलने के लिए पाँव, काम करने के लिए हाथ, सोचने के लिए दिमाग़ और ऐसी ही अनगिनत दूसरी चीज़ें जो पहले से उसकी सब ज़रूरतों का ध्यान रखते हुए उसके छोटे से जिस्म में लपेटकर रख दी गई हैं। फिर जब वह दुनिया में क़दम रखता है तो ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए इतना सामान उसको मिलता है जिसका आप हिसाब भी नहीं लगा सकते। हवा है, रौशनी है, गर्मी है, पानी है, ज़मीन है, माँ के सीने में पहले से दूध मौजूद है, माँ और बाप और रिश्तेदार यहाँ तक कि ग़ैरों के दिलों में उसकी मुहब्बत पैदा कर दी गई है, जिससे उसको पाला-पोसा जाता है फिर जैसे-जैसे वह बढ़ता जाता है उसकी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए हर तरह का सामान उसको मिलता जाता है और ऐसा मालूम होता है मानो ज़मीन और आसमान की सारी ताक़तें उसके पालने-पोसने और उसकी ख़िदमत के लिए काम कर रही हैं।

इसके बाद और आगे बढ़िए। दुनिया में काम करने के लिए जितनी क़ाबिलियतों की ज़रूरत है वे सब इनसान को दी गई हैं। जिस्मानी ताक़त, अक़्ल, सूझ-बूझ, बोलने की ताक़त और ऐसी ही बहुत-सी क़ाबिलियतें थोड़ी या बहुत हर इनसान में मौजूद हैं। लेकिन यहाँ अल्लाह तआला ने अजीब इन्तिज़ाम किया है। सारी क़ाबिलियतें सब इनसानों को एक-सी नहीं दीं। अगर ऐसा होता तो कोई किसी का मुहताज न होता, न कोई किसी की परवाह करता। इसलिए अल्लाह तआला ने तमाम इनसानों की कुल ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए सब क़ाबिलियतें पैदा तो इनसानों ही में कीं, मगर इस तरह कि किसी को एक क़ाबिलियत ज़्यादा दे दी और दूसरे को दूसरी क़ाबिलियत। आप देखते हैं कि कुछ लोग जिस्मानी मेहनत की ताक़त दूसरों से ज़्यादा लेकर आते हैं, कुछ लोगों में किसी ख़ास हुनर या पेशे की पैदाइशी क़ाबिलियत होती है जो दूसरों में नहीं होती और कुछ लोगों में ज़िहानत और अक़्ल दूसरों से ज़्यादा होती है। कुछ लोग पैदाइशी तौर पर मैदाने-जंग के कमाण्डर होते हैं। कुछ लोगों में हुकूमत करने की ख़ास सलाहियत होती है। कुछ लोग तक़रीर की ग़ैर-मामूली सलाहियत लेकर पैदा होते हैं और कुछ में लिखने की फ़ितरी क़ाबिलियत होती है। कोई ऐसा शख़्स पैदा होता है कि उसका दिमाग़ हिसाब में ख़ूब चलता है यहाँ तक कि बड़े-बड़े पेचीदा सवाल

इस तरह हल कर देता है कि दूसरों के ज़ेहन वहाँ तक नहीं पहुँचते। एव दूसरा शख़्स ऐसा होता है कि अजीब-अजीब चीज़ें ईजाद करता है औं उसकी ईजादों को देखकर दुनिया दंग रह जाती है। एक और शख़्स ऐस बेमिसाल क़ानूनी दिमाग़ लेकर आता है कि क़ानून के जो नुकते बरसों ग़ौ करने के बाद भी दूसरों की समझ में नहीं आते उसकी नज़र अपने आप उन तक पहुँच जाती है, यह ख़ुदा की देन है। कोई शख़्स अपने अन्दर ख़ुद ये क़ाबिलियतें पैदा नहीं कर सकता, न तालीम और तरबियत से ये चीज़ें पैदा होती हैं। अस्ल में ये पैदाइशी क़ाबिलियतें हैं और ख़ुदा अपनी हिकमत से जिसको यह क़ाबिलियत चाहता है, देता है।

ख़ुदा की इस देन पर भी आप ग़ौर करेंगे तो आपको मालूम होगा कि इनसानी तहज़ीब और कल्चर के लिए जिन क़ाबिलियतों की ज़रूरत ज़्यादा होती है, वे ज़्यादा इनसानों में पैदा की जाती हैं और जिनकी ज़रूरत जितनी कम होती है वे उतने ही कम आदमियों में पैदा की जाती हैं। सिपाही बहुत पैदा होते हैं। किसान, बढ़ई, लुहार और ऐसे ही दूसरे कामों के आदमी ज़्यादा पैदा होते हैं, मगर इल्मी और दिमाग़ी ताक़तें रखनेवाले और सियासत और कमाण्डरी की क़ाबिलियत रखनेवाले कम पैदा होते हैं। फिर वे लोग और भी कम पैदा होते हैं जो किसी ख़ास फ़न में ग़ैर-मामूली क़ाबिलियत के मालिक हों, क्योंकि उनके कारनामों से सदियों के लिए इनसानों को उन जैसे क़ाबिल लोगों की ज़रूरत नहीं रहती।

अब सोचना चाहिए कि दुनिया में इनसानी ज़िन्दगी को कामयाब बनाने के लिए सिर्फ़ यही एक ज़रूरत तो नहीं है कि इनसानों में इंजीनियर, हिसाबदाँ, साइंसदाँ, क़ानूनदाँ, सियासत और मालियात में माहिर और दूसरे पेशों की क़ाबिलियत रखनेवाले लोग ही पैदा हों। इन सबसे बढ़कर एक और ज़रूरत भी तो है और वह यह कि कोई ऐसा हो जो इनसान को ख़ुदा का रास्ता बताए। दूसरे लोग तो सिर्फ़ यह बतानेवाले हैं कि इस दुनिया में इनसान के लिए क्या है और उसको किस-किस तरह बरता जा सकता है, मगर कोई यह बतानेवाला भी तो होना चाहिए कि इनसान ख़ुद किसके लिए है। और इनसान को दुनिया में यह सब सामान किसने दिया है और उस

नेवाले की मर्ज़ी क्या है, ताकि इनसान उसी के मुताबिक़ दुनिया में ज़िन्दगी सर करके यक़ीनी और हमेशा रहनेवाली कामयाबी हासिल करे। यह नसान की अस्ली और सबसे बड़ी ज़रूरत है। अक़्ल यह मानने से इनकार रती है कि जिस ख़ुदा ने हमारी छोटी-से-छोटी ज़रूरत को पूरा करने का न्तिज़ाम किया है, उसने ऐसी अहम ज़रूरत को पूरा करने पर ध्यान न दिया ोगा। नहीं ऐसा बिलकुल नहीं है। ख़ुदा ने जिस तरह एक-एक हुनर और क-एक इल्म और फ़न की ख़ास क़ाबिलियत रखनेवाले इनसान पैदा किए ैं, उसी तरह ऐसे इनसान भी पैदा किए हैं जिनमें ख़ुदा को पहचानने की ऊँची क़ाबिलियत थी। उसने उनको दीन और अख़लाक़ और शरीअत का इल्म अपने पास से दिया और उनको इस ख़िदमत पर मुक़र्रर किया कि दूसरे लोगों को इन चीज़ों की तालीम दें। यही वे लोग हैं जिनको नबी या रसूल या पैग़म्बर कहा जाता है।

पैग़म्बर की पहचान

जिस तरह दूसरे इल्म और फ़न के बाकमाल लोग एक ख़ास तरह का ज़ेहन और तबीअत लेकर पैदा होते हैं इसी तरह पैग़म्बर भी एक ख़ास क़िस्म की तबीअत लेकर आते हैं।

एक पैदाइशी शायर का कलाम सुनते ही हमको यह मालूम हो जाता है कि यह शायरी की ख़ास क़ाबिलियत लेकर पैदा हुआ है, क्योंकि दूसरे लोग चाहे कितनी ही कोशिश करें वैसा कलाम नहीं कह सकते। इसी तरह एक पैदाइशी मुक़र्रिर (तक़रीर करनेवाला) एक पैदाइशी लिखनेवाला, एक पैदाइशी मूजिद (ईजाद करनेवाला), एक पैदाइशी लीडर भी अपने कारनामों से साफ़ पहचान लिया जाता है, क्योंकि इनमें से हर एक अपने काम में ग़ैर-मामूली क़ाबिलियत दिखाता है, जो दूसरों में नहीं होती। ऐसा ही हाल पैग़म्बर का भी है। उसके ज़ेहन में वे बातें आती हैं जो दूसरे सोच भी नहीं सकते। वह ऐसी चीज़ें बयान करता है जो उसके सिवा दूसरा इनसान बयान नहीं कर सकता। उसकी नज़र ऐसी बारीक बातों पर अपने-आप पहुँच जाती है जिन तक दूसरों की नज़र बरसों के सोच-विचार के बाद भी नहीं पहुँचती। वह जो कुछ कहता है, हमारी अक़्ल उसको मानती है, हमारा दिल गवाही देता है कि

ज़रूर ऐसा ही होना चाहिए। दुनिया के तजरिबों और कायनात पर नज़र डालने से उसकी एक-एक बात सच्ची साबित होती है, लेकिन अगर हम खुद वैसी बात करना चाहें तो नहीं कर सकते। फिर उसकी तबीअत ऐसी पाकीज़ा होती है कि वह हर मामले में सच्चा, सीधा और शरीफ़ाना तरीक़ा अपनाता है। वह कभी कोई ग़लत बात नहीं कहता, कोई बुरा काम नहीं करता, हमेशा नेकी और सच्चाई की तालीम देता है और जो कुछ दूसरों से कहता है उसको खुद करके दिखाता है। उसकी ज़िन्दगी में कोई ऐसी मिसाल नहीं मिलती कि जो कुछ कहते उसके ख़िलाफ़ अमल करे। उसके कहने और करने में कोई ज़ाती ग़रज़ नहीं होती। वह दूसरों के भले के लिए खुद नुक़सान उठाता है और अपने भले के लिए किसी का नुक़सान नहीं करता। उसकी सारी ज़िन्दगी सच्चाई, शराफ़त, पाकीज़गी, बुलन्दख़याली और ऊँचे दर्जे की इनसानियत का नमूना होती है, जिसमें ढूँढने से भी कोई ऐब नज़र नहीं आता। इन्हीं चीज़ों को देखकर साफ़ पहचान लिया जाता है कि यह शख़्स खुदा का सच्चा पैग़म्बर है।

पैग़म्बर की इताअत

जब यह मालूम हो जाए कि फ़ुलाँ शख़्स खुदा का सच्चा पैग़म्बर है तो उसकी बात मानना, उसकी इताअत करना और उसके तरीक़े की पैरवी करना ज़रूरी है। यह बात अक़्ल के बिलकुल ख़िलाफ़ है कि आप एक शख़्स को पैग़म्बर भी तसलीम करें और फिर उसकी बात न मानें, इसलिए कि पैग़म्बर मान लेने का मतलब यह है कि आपने मान लिया कि वह जो कुछ कह रहा है खुदा की तरफ़ से कह रहा है, और जो कुछ कर रहा है खुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ कर रहा है। अब आप जो कुछ उसके ख़िलाफ़ कहेंगे या करेंगे वह खुदा के ख़िलाफ़ होगा, और जो बात खुदा के ख़िलाफ़ हो वह कभी हक़ नहीं हो सकती। इसलिए किसी को पैग़म्बर मानने से यह बात अपने-आप लाज़िम हो जाती है कि उसकी बात को बे-झिझक फ़ौरन मान लिया जाए और उसके हुक्म के आगे सिर झुका दिया जाए चाहे उसकी हिकमत और उसका फ़ायदा आपकी समझ में आए या न आए। जो बात पैग़म्बर की तरफ़ से है, उसका पैग़म्बर की तरफ़ से होना ही इस बात की

दलील है कि वह सच्ची है और तमाम फ़ायदे और हिकमतें उसमें मौजूद हैं। अगर किसी बात का फ़ायदा आपकी समझ में नहीं आता तो इसका मतलब यह नहीं है कि उस बात में कोई ख़राबी है बल्कि इसका मतलब यह है कि ख़ुद आपकी समझ में कोई कमी है। जो शख़्स किसी फ़न का माहिर नहीं है, ज़ाहिर है वह किसी फ़न की बारीकियों को नहीं समझ सकता, लेकिन वह कितना बेवक़ूफ़ होगा अगर वह फ़न के माहिर की बात को सिर्फ़ इस वजह से न माने कि उसकी समझ में वह बात नहीं आती। देखिए, दुनिया के हर काम में उसके माहिर की ज़रूरत पड़ती है और माहिर को काम सौंपने के बाद उसपर पूरा भरोसा किया जाता है और उसके काम में दख़ल नहीं दिया जाता, क्योंकि सब लोग सब कामों के माहिर नहीं हो सकते और न दुनिया भर की तमाम चीज़ों को समझ सकते हैं, आपको अपनी सारी अक़्ल और होशियारी सिर्फ़ इस बात पर लगानी है कि आप बेहतरीन माहिर ढूंढ़ लें। जब किसी के बारे में आपको यक़ीन हो जाए कि वह अपने फ़न का बेहतरीन माहिर है तो आपको उसपर पूरा भरोसा करना चाहिए फिर उसके कामों में दख़ल देना और एक-एक बात के बारे में यह कहना कि पहले हमें समझा दो वरना हम न मानेंगे, अक़्लमन्दी नहीं बल्कि बेवक़ूफ़ी है। किसी वकील को मुक़दमा सुपुर्द करने के बाद आप ऐसी दख़लन्दाज़ी करेंगे तो वह आपको अपने दफ़्तर से निकाल देगा। किसी डॉक्टर से आप उसकी एक-एक हिदायत पर दलील पूछेंगे तो वह आपका इलाज करना छोड़ देगा। ऐसा ही मामला मज़हब का भी है। आपको ख़ुदा का इल्म हासिल करने की ज़रूरत है, आप यह जानना चाहते हैं कि ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारने का तरीक़ा क्या है? आपके पास ख़ुद इन चीज़ों को मालूम करने का कोई ज़रिआ नहीं है। अब आपका फ़र्ज़ है कि ख़ुदा के सच्चे पैग़म्बर की तलाश करें। इस तलाश में आपको बहुत होशियारी और समझ-बूझ से काम लेना चाहिए, क्योंकि अगर किसी ग़लत आदमी को आपने पैग़म्बर समझ लिया तो वह आपको ग़लत रास्ते पर लगा देगा। मगर जब आपको ख़ूब जाँच-पड़ताल करने के बाद यह यक़ीन हो जाए कि फ़ुलाँ शख़्स ख़ुदा का सच्चा पैग़म्बर है तो उसपर आपको पूरा भरोसा करना चाहिए और उसके हर

हुक्म पर चलना चाहिए।

पैग़म्बरों पर ईमान लाने की ज़रूरत

जब आपको मालूम हो गया कि खुदा का सच्चा और सीधा रास्ता वह है जो खुदा की तरफ़ से खुदा का पैग़म्बर बताए तो यह बात आप खुद समझ सकते हैं कि पैग़म्बर पर ईमान लाना और उसकी इताअत और पैरवी करना तमाम इनसानों के लिए ज़रूरी है और जो शख़्स पैग़म्बर के तरीक़े को छोड़कर खुद अपनी अक़्ल से कोई तरीक़ा निकालता है वह यक़ीनन गुमराह है।

इस मामले में लोग अजीब-अजीब ग़लतियाँ करते हैं। कुछ लोग ऐसे हैं जो पैग़म्बर की सच्चाई को तसलीम तो करते हैं, मगर न उसपर ईमान लाते हैं और न उसकी पैरवी करते हैं। ऐसे लोग सिर्फ़ काफ़िर ही नहीं बेवक़ूफ़ भी हैं, क्योंकि पैग़म्बर को सच्चा पैग़म्बर मानने के बाद उसकी पैरवी न करने का मतलब यह है कि आदमी जान-बूझकर झूठ की पैरवी करे। ज़ाहिर है इससे बढ़कर कोई बेवक़ूफ़ी नहीं हो सकती।

कुछ लोग कहते हैं कि हमें पैग़म्बर की पैरवी करने की ज़रूरत ही नहीं हम खुद अपनी अक़्ल से हक़ का रास्ता मालूम कर लेंगे। यह भी सख़्त ग़लती है। आपने हिसाब (Mathematics) पढ़ा होगा और आप यह जानते हैं कि एक नुक़ते और बिन्दु से दूसरे नुक़ते तक सीधी लाइन सिर्फ़ एक ही हो सकती है, उसके सिवा जितनी भी लाइनें खींची जाएँगी, सब टेढ़ी होंगी या दूसरे नुक़ते तक नहीं पहुँचेंगी। ऐसा ही हाल हक़ के रास्ते का भी है जिसको इस्लाम में 'सिराते-मुस्तक़ीम' (सीधा रास्ता) कहा जाता है। यह रास्ता इनसान से शुरू होकर खुदा तक जाता है और हिसाब के इसी उसूल के मुताबिक़ यह भी एक ही रास्ता हो सकता है। इसके सिवा जितने रास्ते भी होंगे या तो सब टेढ़ें होंगे या फिर खुदा तक न पहुँचेंगे। अब आप ग़ौर करें कि जो सीधा रास्ता है वह तो पैग़म्बर ने बता दिया और उसके सिवा कोई दूसरा रास्ता 'सिराते-मुस्तक़ीम' है ही नहीं। इस रास्ते को छोड़कर जो शख़्स खुद कोई रास्ता तलाश करेगा उसको दो सूरतों में से कोई एक सूरत

रूर पेश आएगी। या तो आपको ख़ुदा तक पहुँचने का कोई रास्ता मिलेगा ˈ नहीं, या अगर मिला भी तो बहुत फेर का रास्ता होगा। पहली सूरत में ा उसकी तबाही ज़ाहिर है, रही दूसरी सूरत तो उसके भी हिमाक़त होने में क नहीं किया जा सकता। एक बेअक़्ल जानवर भी एक जगह से दूसरी गह जाने के लिए टेढ़े रास्ते को छोड़कर सीधे रास्ते ही को इख़्तियार करता । फिर उस इनसान को आप क्या कहेंगे जिसको ख़ुदा का एक नेक बन्दा ाधा रास्ता दिखाए और वह कहे कि नहीं, मैं तेरे बताए हुए रास्ते पर नहीं ाऊँगा, बल्कि ख़ुद टेढ़े रास्ते पर भटक-भटककर अपनी मंज़िल ढूँढ लूँगा।

यह तो वह बात है जो सरसरी नज़र में हर शख़्स समझ सकता है, किन अगर आप ज़्यादा ग़ौर करके देखेंगे तो आपको मालूम होगा कि जो ख़्स पैग़म्बर पर ईमान लाने से इनकार करता है उसको ख़ुदा तक पहुँचने ा कोई रास्ता नहीं मिल सकता—न टेढ़ा न सीधा। इसकी वजह यह है कि ो शख़्स सच्चे आदमी की बात मानने से इनकार करता है उसके दिमाग़ ˈ ज़रूर कोई ऐसी ख़राबी होगी जिसकी वजह से वह सच्चाई से मुँह मोड़ता । या तो उसकी समझ-बूझ में कमी होगी या उसके दिल में घमण्ड होगा, ा उसकी तबीअत ऐसी टेढ़ी होगी कि वह नेकी और सच्चाई की बातों को ़बूल करने के लिए तैयार ही न होगी, या वह बाप-दादा की अन्धी पैरवी ˈ जकड़ा होगा और जो ग़लत बातें रस्म के तौर पर पहले से चली आती हैं नके ख़िलाफ़ किसी की बात को मानने पर तैयार न होगा, या वह अपनी ़ाहिशों का बन्दा होगा और पैग़म्बर की तालीम को मानने से इसलिए नकार करेगा कि उसके मान लेने के बाद गुनाहों और नाजाइज़ बातों की ाज़ादी बाक़ी नहीं रहती। ये तमाम सबब ऐसे हैं कि अगर इनमें से कोई क सबब भी किसी शख़्स में मौजूद हो तो उसको ख़ुदा का रास्ता कभी नहीं ़ल सकता। और अगर कोई सबब भी मौजूद न हो तो ऐसा नहीं हो सकता क एक सच्चा और नेक आदमी जो तास्सुब न रखता हो, एक सच्चे पैग़म्बर ी तालीम क़बूल करने से इनकार कर दे।

सबसे बड़ी बात यह है कि पैग़म्बर ख़ुदा की तरफ़ से भेजा हुआ होता , और ख़ुदा ही का यह हुक्म है कि उसपर ईमान लाओ और उसकी पैरवी

करो। अब जो कोई पैग़म्बर पर ईमान नहीं लाता, वह ख़ुदा के ख़िला
बग़ावत करता है। देखिए, आप जिस हुकूमत में रहते हैं, उसकी तरफ़ से र
हाकिम भी मुक़र्रर होगा, आपको उसका हुक्म मानना पड़ेगा। अगर आ
उसको हाकिम मानने से इनकार करेंगे तो इसका मतलब यह होगा कि आप
ख़ुद हुकूमत के ख़िलाफ़ बग़ावत की है। हुकूमत को मानना और उस
मुक़र्रर किए हुए हाकिम को न मानना ये दोनों बातें एक-दूसरे की उलट है
ऐसी ही मिसाल ख़ुदा और उसके भेजे हुए पैग़म्बर की भी है। ख़ुदा तमा
इनसानों का अस्ल बादशाह है। जिस शख़्स को उसने इनसान की हिदाय
के लिए भेजा हो और जिसकी पैरवी का हुक्म दिया हो, हर इनसान का फ़
है कि उसको पैग़म्बर तसलीम करे और हर दूसरी चीज़ की पैरवी छोड़व
सिर्फ़ उसी की पैरवी इख़्तियार करे। उससे मुँह मोड़नेवाला बहरहाल काफ़ि
है, चाहे वह ख़ुदा को मानता हो या न मानता हो।

पैग़म्बरी की मुख़्तसर तारीख़

अब हम आपको बताते हैं कि इनसानों में पैग़म्बरी का सिलसिला कि
तरह शुरू हुआ, किस तरह तरक़्क़ी करते-करते आख़िरी और सबसे ब
पैग़म्बर पर ख़त्म हुआ।

आपने सुना होगा कि अल्लाह तआला ने सबसे पहले एक इनसान व
पैदा किया था। फिर उसी इनसान से उसका जोड़ा पैदा किया और उस जो
की नस्ल चलाई जो अनगिनत सदियों से फैलते-फैलते पूरी ज़मीन में छा गः
दुनिया में जितने इनसान भी पैदा हुए हैं वे सब उसी एक जोड़े की औल
हैं। तमाम क़ौमों की मज़हबी और तारीख़ी रिवायतें इस मामले में एक ही
कि इनसानी नस्ल की शुरुआत एक ही इनसान से हुई है। साइंस की रिर
और तहक़ीक़ों से भी साबित नहीं हुआ कि ज़मीन के अलग-अलग हिस
में अलग-अलग इनसान बनाए गए थे, बल्कि अक्सर साइंसदाँ भी य
अन्दाज़ा लगाते हैं कि पहले एक ही इनसान पैदा हुआ होगा, और इनस
की मौजूदा नस्ल दुनिया में जहाँ कहीं भी पाई जाती है उसी एक शख़्स व
औलाद है।

हमारी ज़बान में इस पहले इनसान को 'आदम' (अलैहि॰) कहते हैं। सी लफ़्ज़ से 'आदमी' लफ़्ज़ निकला है जो इनसान ही के मानी में इस्तेमाल ाता है। अल्लाह तआला ने सबसे पहले पैग़म्बर हज़रत आदम (अलैहि॰) ही ो बनाया और उसको हुक्म दिया कि वह अपनी औलाद को इस्लाम की ालीम दे, यानी उनको यह बताए कि तुम्हारा और तमाम दुनिया का ख़ुदा क है। उसी की तुम इबादत करो, उसी के आगे सिर झुकाओ, उसी से दद माँगो और उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ दुनिया में नेकी और इनसाफ़ की ज़िन्दगी बसर करो। अगर तुम ऐसा करोगे तो तुमको अच्छा इनाम मिलेगा ौर अगर उसकी इताअत से मुँह मोड़ोगे तो बड़ी सज़ा पाओगे।

हज़रत आदम (अलैहि॰) की औलाद में जो लोग अच्छे थे वे बाप के ताए हुए सीधे रास्ते पर चलते रहे, मगर जो लोग बुरे थे उन्होंने उसे छोड़ देया। धीरे-धीरे हर तरह की बुराइयाँ पैदा हो गईं। किसी ने सूरज, चाँद और ारों को पूजना शुरू कर दिया, किसी ने पेड़ों, जानवरों और नदियों की पूजा ुरू कर दी, किसी ने सोचा कि हवा और पानी और आग और बीमारी और न्दुरुस्ती और क़ुदरत की दूसरी नेमतों और ताक़तों के ख़ुदा अलग-अलग ं, हर एक की पूजा करनी चाहिए ताकि सब ख़ुश होकर हमपर मेहरबान ों। इसी तरह जिहालत की वजह से शिर्क और बुतपरस्ती की बहुत-सी ूरतें पैदा हो गईं, जिनसे बीसों मज़हब निकल आए। यह वह ज़माना था जब हज़रत आदम (अलैहि॰) की नस्ल दुनिया के बहुत-से हिस्सों में फैल ुकी थी। बहुत-सी क़ौमें बन गई थीं। हर क़ौम ने अपना एक नया मज़हब बना लिया था और हर एक की रस्में भी अलग-अलग थीं। ख़ुदा को भूलने के साथ लोग उस क़ानून को भी भूल गए थे जो हज़रत आदम (अलैहि॰) ने अपनी औलाद को सिखाया था। लोगों ने ख़ुद अपनी ख़ाहिशों की पैरवी शुरू कर दी, हर तरह की बुरी रस्में पैदा हुईं, हर क़िस्म के जाहिली ख़याल फैले, अच्छे-बुरे के फ़र्क़ में ग़लतियाँ की गईं, बहुत-सी बुरी चीज़ें अच्छी समझ ली गईं और बहुत-सी अच्छी चीज़ों को बुरा ठहरा लिया गया।

अब अल्लाह तआला ने हर क़ौम में पैग़म्बर भेजने शुरू किए जो लोगों को उसी इस्लाम की तालीम देने लगे जिसकी तालीम शुरू में हज़रत आदम

(अलैहि०) ने इनसानों को दी थी। इन पैग़म्बरों ने अपनी-अपनी क़ौमों व भूला हुआ सबक़ याद दिलाया। उन्हें एक ख़ुदा की परस्तिश और पूज सिखाई, शिर्क और बुतपरस्ती से रोका, जाहिली रस्मों को तोड़ा, ख़ुदा व मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करने का तरीक़ा बताया और सही क़ानू बताकर उसकी पैरवी की तालीम दी। हिन्दुस्तान, चीन, इराक़, ईरान, मिस्र अफ़्रीक़ा, यूरोप ग़रज़ दुनिया का कोई मुल्क ऐसा नहीं है जहाँ ख़ुदा की तरफ़ से उसके सच्चे पैग़म्बर न आए हों। उन सबका मज़हब एक ही था और व यही मज़हब था जिसको हम अपनी ज़बान में इस्लाम कहते हैं।[1] इतना ज़रू है कि तालीम के तरीक़े और ज़िन्दगी के क़ानून कुछ बदले हुए थे। हर क़ौम में जिस क़िस्म की गुमराही फैली हुई थी उसी को दूर करने पर ज़ोर दिय गया। जिस क़िस्म के ग़लत ख़यालात फैले हुए थे उन्हीं के सुधार पर ज़्याद ध्यान दिया गया। तहज़ीब, कल्चर, इल्म और अक़्ल के लिहाज़ से जब क़ौमें शुरुआती दर्जे में थीं तो उनको सादा तालीम और सादा शरीअत दी गई जैसे-जैसे तरक़्क़ी होती गई तालीम और शरीअत को भी बढ़ाया जाता रहा मगर यह फ़र्क़ सिर्फ़ ज़ाहिरी था, रूह सबकी एक थी यानी अक़ीदे में तौहीद अमल में नेकी और भलाई और आख़िरत की जज़ा और सज़ा पर यक़ीन

पैग़म्बरों के साथ भी इनसान ने अजीब मामला किया। पहले तो उनको तकलीफ़ें दी गईं, उनकी हिदायत को मानने से इनकार किया गया। किसी को वतन से निकाला गया, किसी को क़त्ल किया गया, किसी को उम्र-भर की तालीम और तबलीग़ के बाद मुश्किल से पाँच-दस पैरवी करनेवाले मिल सके। मगर ख़ुदा के ये चुने हुए बन्दे बराबर अपना काम किए चले गए, यहाँ

1. आमतौर पर लोग इस ग़लतफ़हमी में हैं कि इस्लाम की शुरुआत हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) से हुई है, यहाँ तक कि आप (सल्ल.) को इस्लाम का बानी (बुनियाद रखनेवाला) तक कह दिया जाता है। यह एक बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी है जिसे अपने ज़ेहन से बिलकुल निकाल देना चाहिए। हर शख़्स को यह बात अच्छी तरह जान लेनी चाहिए कि इस्लाम हमेशा से इनसान का एक ही हक़ीक़ी मज़हब है और दुनिया में जब और जहाँ भी कोई पैग़म्बर ख़ुदा की तरफ़ से आया है वह यही मज़हब लेकर आया है।

तक कि उनकी तालीमात ने असर किया और बड़ी-बड़ी क़ौमें उनकी पैरवी करनेवाली (माननेवाली) बन गईं। इसके बाद गुमराही ने दूसरी सूरत इख़्तियार की। पैग़म्बरों के दुनिया से चले जाने के बाद उनकी उम्मतों ने उनकी तालीमात को बदल डाला। उनकी किताबों में अपनी तरफ़ से हर तरह के ख़यालात मिला दिए। इबादतों के नए-नए तरीक़े अपना लिए। कुछ लोगों ने ख़ुद पैग़म्बरों की पूजा शुरू कर दी। किसी ने अपने पैग़म्बर को ख़ुदा का अवतार क़रार दिया (यानी यह कि ख़ुदा ख़ुद इनसान की सूरत में उतर आया था), किसी ने अपने पैग़म्बर को ख़ुदा का बेटा कहा। किसी ने अपने पैग़म्बर को ख़ुदाई में शरीक ठहराया। ग़रज़ इनसान ने यह ग़ज़ब ढाया कि जिन लोगों ने बुतों को तोड़ा था, इनसानों ने ख़ुद उन्हीं को बुत बना लिया। फिर जो शरीअतें ये पैग़म्बर अपनी उम्मतों को दे गए थे, उनको भी तरह-तरह से बिगाड़ा गया, उनमें हर क़िस्म की जाहिली रस्में मिला दी गईं। अफ़सानों और झूठी रिवायतों की मिलावट कर दी गई, इनसानों के बनाए हुए क़ानून को उनके साथ गडमड कर दिया गया। यहाँ तक कि कुछ सदियों के बाद यह मालूम करने का कोई ज़रिआ ही बाक़ी न रहा कि पैग़म्बर की अस्ली तालीम और अस्ली शरीअत क्या थी और बादवालों ने उसमें क्या-क्या मिला दिया।[1] ख़ुद पैग़म्बरों की ज़िन्दगी के हालात भी रिवायतों में ऐसे गुम हो गए हैं कि उनके बारे में कोई चीज़ भरोसे के क़ाबिल न रही। फिर भी पैग़म्बरों की कोशिशें सब-की-सब बेकार नहीं गईं। तमाम मिलावटों के बावजूद कुछ-न-कुछ अस्ल सच्चाई हर क़ौम में बाक़ी रह गई। ख़ुदा का ख़याल और आख़िरत की ज़िन्दगी का ख़याल किसी-न-किसी सूरत में तमाम

1. यहाँ यह बात अच्छी तरह समझ लेने की है कि पैग़म्बरों की उम्मतों ने इसी तरह अपने अस्ल मज़हब (यानी इस्लाम) को बिगाड़कर वे मज़हब बनाए जो इस वक़्त अलग-अलग नामों से दुनिया में जाने जाते हैं। मिसाल के तौर पर हज़रत ईसा (अलैहि.) ने जिस मज़हब की तालीम दी थी वह तो इस्लाम ही था, मगर उनके बाद उनके माननेवालों ने ख़ुद हज़रत ईसा (अलैहि.) को माबूद बना डाला, और उनकी दी हुई तालीम के साथ दूसरी बातों को मिला-जुलाकर वह मज़हब गढ़ लिया, जिसका नाम आज 'ईसाइयत' है।

क़ौमों में फैल गया। नेकी, सच्चाई और अख़लाक़ के कुछ उसूल आमतौर पर दुनिया में तसलीम कर लिए गए और तमाम क़ौमों के पैग़म्बरों ने अलग-अलग एक-एक क़ौम को इस हद तक तैयार कर दिया कि दुनिया में एक ऐसे मज़हब की तालीम फैलाई जा सके जो सारे ही इनसानों का मज़हब हो।

जैसा कि हमने आपको ऊपर बताया है, शुरू में हर क़ौम में अलग-अलग पैग़म्बर आते थे और उनकी तालीम उनकी क़ौम ही के अन्दर महदूद रहती थी। इसकी वजह यह थी कि उस वक़्त सब क़ौमें एक-दूसरे से अलग थीं, उनके बीच ज़्यादा मेल-जोल न था, हर क़ौम अपने वतन तक महदूद थी। ऐसी हालत में कोई आम और मिली-जुली तालीम तमाम क़ौमों में फैलनी बहुत मुश्किल थी। इसके अलावा इन क़ौमों के हालात भी एक-दूसरे से बिलकुल जुदा थे। जिहालत ज़्यादा बढ़ी हुई थी। इस जिहालत की वजह से अक़ीदे और अख़लाक़ की जो ख़राबियाँ पैदा हुई थीं, हर जगह अलग क़िस्म की थीं। इसलिए ज़रूरी था कि ख़ुदा के पैग़म्बर हर क़ौम को अलग-अलग तालीम और हिदायत दें, धीरे-धीरे ग़लत ख़यालात को मिटाकर सही ख़यालात फैलाएँ, जाहिली तरीक़ों को छोड़कर ऊँचे दर्जे के क़ानून की पैरवी सिखाएँ और इस तरह उनकी तरबियत करें जैसे बच्चों की की जाती है। ख़ुदा ही जानता है कि इस तरीक़े से क़ौमों की तालीम में कितने हज़ार साल लगे होंगे। बहरहाल तरक़्क़ी करते-करते आख़िरकार वह वक़्त आया जब इनसानी बिरादरी बचपन की हालत से गुज़रकर जवानी को पहुँचने लगी। तिजारत और सनअत (इन्डस्ट्री) की तरक़्क़ी के साथ-साथ क़ौमों के आपसी ताल्लुक़ भी एक-दूसरे से क़ायम हो गए। चीन और जापान से लेकर यूरोप और अफ़्रीक़ा के दूर-दराज़ मुल्कों तक जहाज़रानी और ज़मीनी सफ़रों का सिलसिला क़ायम हो गया। अक्सर क़ौमों में लिखने-पढ़ने का रिवाज हुआ, इल्म और फ़न फैले और क़ौमों के बीच ख़यालात और इल्मी चीज़ों का तबादला होने लगा। बड़े-बड़े फ़ातेह पैदा हुए और उन्होंने बड़ी-बड़ी हुकूमतें क़ायम करके कई-कई मुल्कों और क़ौमों को एक सियासी निज़ाम में मिला दिया। इस तरह वह दूरी और जुदाई जो पहले इनसानी क़ौमों में पाई जाती थी धीरे-धीरे कम होती चली गई और यह मुमकिन हो गया कि इस्लाम की

क ही तालीम और एक ही शरीअत तमाम दुनिया के लिए भेजी जाए। अब ा ढाई हज़ार साल पहले इनसान की हालत इस हद तक तरक़्क़ी कर चुकी ो कि उसे एक मुश्तरक मज़हब की ज़रूरत-सी महसूस होने लगी थी। ौद्धमत हालाँकि कोई पूरा मज़हब न था, उसमें कुछ अख़लाक़ी उसूल ही ा, मगर हिन्दुस्तान से निकलकर वह एक तरफ़ जापान और मंगोलिया तक ौर दूसरी तरफ़ अफ़ग़ानिस्तान और बुख़ारा तक फैल गया और उसकी ाबलीग़ करनेवाले दूर-दूर मुल्कों तक जा पहुँचें। उसके कुछ सदी बाद ईसाई ाज़हब पैदा हुआ। हालाँकि हज़रत ईसा (अलैहि॰) इस्लाम की तालीम लेकर आए थे, मगर उनके बाद ईसाइयत के नाम से नाक़िस और नामुकम्मल ाज़हब बना लिया गया और ईसाइयों ने इस मज़हब को अफ़्रीक़ा और यूरोप क दूर-दराज़ मुल्कों में फैला दिया। इससे मालूम होता है कि उस वक़्त ुनिया ख़ुद एक आम इनसानी मज़हब की माँग कर रही थी और इसके लिए यहाँ तक तैयार हो गई थी कि जब उसे कोई पूरा और सही मज़हब न मिला ो उसने कच्चे और अधूरे मज़हबों ही को इनसानी क़ौमों में फैलाना शुरू कर दिया।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की नुबूवत

यह वक़्त था जब तमाम दुनिया और तमाम इनसानी क़ौमों के लिए एक पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को अरब में पैदा किया गया और उनको इस्लाम की पूरी तालीम और मुकम्मल क़ानून देकर उसे सारी दुनिया में फैलाने का काम सौंपा गया।

दुनिया का नक़्शा उठाकर देखिए, आप एक ही नज़र में महसूस कर लेंगे कि पूरी दुनिया की पैग़म्बरी के लिए ज़मीन पर अरब से ज़्यादा मुनासिब मक़ाम और कोई नहीं हो सकता। यह मुल्क एशिया और अफ़्रीक़ा के बिलकुल बीच में है और यूरोप भी यहाँ से बहुत क़रीब है, ख़ासकर उस ज़माने में यूरोप की तहज़ीब-याफ़्ता क़ौमें ज़्यादातर यूरोप के दक्खिनी हिस्से में आबाद थीं, और यह हिस्सा अरब से उतना ही क़रीब है जितना हिन्दुस्तान है।

फिर उस ज़माने की तारीख़ पढ़िए, आपको मालूम होगा कि इस नुबूवत के लिए ज़माने में अरब की क़ौम से ज़्यादा मुनासिब कोई क़ौम न थी। दूसरी बड़ी-बड़ी क़ौमें अपना-अपना ज़ोर दिखाकर बेदम हो चुकी थीं, जबकि अरब की क़ौम ताज़ा दम थी। तहज़ीबी तरक़्क़ी से दूसरी क़ौमों की आदतें बिगड़ गई थीं और अरब की क़ौम में उस वक़्त कोई ऐसा कल्चर नहीं था जो उसको आराम-तलब और ऐश-पसन्द और नीच बना देता। छठी सदी ईसवी के अरब उस ज़माने की तहज़ीब-याफ़्ता क़ौमों के बुरे असर से बिलकुल पाक थे। उनमें वे सभी इनसानी ख़ूबियाँ मौजूद थीं जो एक ऐसी क़ौम में हो सकती हैं जिसको बिगड़ी हुई तहज़ीब की हवा न लगी हो। वे बहादुर थे, निडर थे, दिल खोलकर ख़र्च करनेवाले थे, वादे के पक्के, आज़ाद ख़याल और आज़ादी को पसन्द करनेवाले थे, किसी क़ौम के ग़ुलाम न थे, अपनी इज़्ज़त पर जान दे देना उनके लिए आसान था, बड़ी ही सादा ज़िन्दगी बसर करते थे और ऐश-परस्ती से दूर थे। इसमें शक नहीं कि उनमें बहुत-सी बुराइयाँ भी थीं, मगर जैसा कि आगे चलकर आपको मालूम होगा कि ये बुराइयाँ उनमें इसलिए थीं कि ढाई हज़ार साल से उनके यहाँ कोई पैग़म्बर न आया था,[1] न कोई ऐसा रहनुमा पैदा हुआ था जो उनके अख़लाक़ सुधारता और उन्हें तहज़ीब सिखाता। सदियों तक रेगिस्तान में आज़ाद ज़िन्दगी बसर करने की वजह से उनमें जिहालत फैल गई थी। वे अपनी जिहालत में इतने सख़्त हो गए थे कि उनको 'आदमी' बनाना किसी मामूली इनसान के बस का काम न था। लेकिन इसके साथ उनमें यह क़ाबिलियत ज़रूर मौजूद थी कि अगर कोई ज़बरदस्त इनसान उनकी इसलाह कर दे और उसकी तालीम के असर से वे किसी ऊँचे मक़सद को लेकर उठ खड़े हों तो दुनिया को बदलकर रख दें। पैग़म्बरे-आलम की तालीम को फैलाने के लिए ऐसी ही जवान और ताक़तवर क़ौम की ज़रूरत थी।

इसके बाद अरबी ज़बान को देखिए। आप जब इस ज़बान को पढ़ेंगे और उसके अदब को देखेंगे तो आपको मालूम होगा कि बुलन्द ख़यालात को

1. हज़रत इबराहीम और हज़रत इसमाईल (अलैहि॰) का ज़माना, हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से ढाई हज़ार साल पहले गुज़र चुका था। इस लम्बी मुद्दत के अन्दर कोई पैग़म्बर अरब में पैदा नहीं हुआ।

अदा करने और ख़ुदाई इल्म की बहुत नाज़ुक और बारीक बातों को बयान करने और दिल में असर पैदा करने के लिए इससे ज़्यादा मुनासिब कोई ज़बान नहीं है। इस ज़बान में बहुत ही छोटे-छोटे जुमलों में बड़े-बड़े मज़मून अदा हो जाते हैं और फिर उनमें ऐसा ज़ोर होता है कि दिलों में तीर और नश्तर की तरह असर करते हैं। ऐसी मिठास होती है कि कानों में रस पड़ता मालूम होता है, ऐसा नग़मा होता है कि आदमी बेइख़्तियार झूमने लगता है। क़ुरआन जैसी किताब के लिए ऐसी ही ज़बान की ज़रूरत थी।

इस तरह अल्लाह तआला की यह बहुत बड़ी हिकमत थी कि उसने सारी दुनिया की पैग़म्बरी के लिए अरब के मक़ाम को चुना। आइए, अब हम आपको बताएँ कि जिस मुबारक ज़ात को इस काम के लिए पसन्द किया गया वह कैसी बेमिसाल थी।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की नुबूवत का सबूत

ज़रा एक हज़ार चार सौ साल पीछे पलटकर देखिए। दुनिया में न तारे-बरक़ी था, न टेलीफ़ोन थे, न रेल थी, न प्रेस थे, न अख़बार और रिसाले छपते थे, न किताबें छपती थीं, न सफ़र और घूमने की वे आसानियाँ थीं जो आजकल पाई जाती हैं। एक मुल्क से दूसरे मुल्क तक जाने में महीनों लग जाते थे। इन हालात में दुनिया के बीच अरब का मुल्क सबसे अलग-थलग पड़ा हुआ था। उसके आसपास ईरान, रूम और मिस्र के मुल्क थे जिनमें कुछ इल्म और फ़न का चर्चा था, मगर रेत के बड़े-बड़े समुद्रों ने अरब को इन सबसे जुदा कर रखा था। अरब के सौदागर ऊँटों पर महीनों सफ़र करके इन मुल्कों में कारोबार के लिए जाते थे, मगर यह ताल्लुक़ सिर्फ़ कारोबार की हद तक था। ख़ुद अरब में कोई ऊँचे दर्जे का कल्चर न था, न कोई स्कूल था और न कोई लाइब्रेरी थी और न लोगों में तालीम की चर्चा थी। पूरे मुल्क में गिनती के लोग थे जिनको कुछ लिखना-पढ़ना आता था, मगर वह भी इतना नहीं कि उस ज़माने के इल्म और फ़न से वाक़िफ़ होते। वहाँ बाक़ायदा कोई हुकूमत भी न थी, कोई क़ानून भी न था। हर क़बीला अपनी जगह 'ख़ुदमुख़्तार' था। लूटमार आम थी। आए दिन लड़ाइयाँ होती रहती थीं।

आदमी की कोई क़ीमत न थी। जिसका जिस पर बस चलता उसे मार डालता और उसके माल पर क़ब्ज़ा कर लेता। अख़लाक़ और तहज़ीब की उनको हवा तक न लगी थी। बदकारी और शराबख़ोरी और जुएबाज़ी का बाज़ार गर्म था। लोग एक-दूसरे के सामने बेझिझक नंगे हो जाते थे। औरतें तक काबा में नंगी होकर तवाफ़ करती थीं। हराम और हलाल में कोई फ़र्क़ न था। अरबों की आज़ादी इतनी बढ़ी हुई थी कि कोई शख़्स किसी क़ायदे, किसी क़ानून और किसी ज़ाब्ते की पाबन्दी के लिए तैयार न था और न किसी हाकिम की इताअत क़बूल कर सकता था। इसपर जिहालत का यह हाल कि सारी क़ौम पत्थर के बुतों को पूजती थी। रास्ता चलते में कोई अच्छा-सा चिकना पत्थर मिल जाता तो उसी को सामने रखकर पूज लेते थे। मतलब यह कि जो गरदनें किसी के सामने न झुकती थीं वे पत्थरों के सामने झुक जाती थीं और यह समझा जाता था कि ये पत्थर उनकी ज़रूरतें पूरी करेंगे।

ऐसी क़ौम और ऐसे हालात में एक शख़्स पैदा होता है, बचपन ही में माँ-बाप और दादा का साया सिर से उठ जाता है। इसलिए इस हालत में जो थोड़ी बहुत तरबियत मिल सकती थी वह भी उसको नहीं मिल पाती, होश सम्भालता है तो अरब के लड़कों के साथ बकरियाँ चराने लगता है, जवान होता है तो सौदागरी में लग जाता है। उठना-बैठना, मिलना-जुलना सब उन्हीं अरबों के साथ है जिनकी हालत हमने ऊपर बयान की है। तालीम का नाम तक नहीं, यहाँ तक कि पढ़ना भी नहीं आता। मगर इसके बावजूद उसकी आदतें, उसके अख़लाक़, उसके ख़यालात सबसे जुदा हैं। वह कभी झूठ नहीं बोलता, किसी से बद-कलामी नहीं करता। उसकी बोलचाल में सख़्ती के बजाय मिठास है कि जो उससे मिलता है उसी का होकर रह जाता है। वह किसी का एक पैसा भी नाजाइज़ नहीं लेता। उसकी ईमानदारी का हाल यह है कि लोग अपना क़ीमती माल उसके पास हिफ़ाज़त के लिए रखवाते हैं, और वह हर एक के माल की हिफ़ाज़त अपनी जान की तरह करता है। सारी क़ौम उसकी ईमानदारी पर भरोसा करती है और उसे 'अमीन' (अमानतदार) के नाम से पुकारती है। उसकी शर्म और हया का यह हाल है कि होश

सम्भालने के बाद किसी ने उसको नंगा नहीं देखा। उसकी शाइस्तगी का यह हाल है कि बदतमीज़ और गन्दे लोगों में पलने और रहने के बावजूद हर बदतमीज़ी और हर गन्दगी से नफ़रत करता है। उसके हर काम में सफ़ाई और सुथराई पाई जाती है। उसके ख़यालात इतने पाकीज़ा हैं कि अपनी क़ौम को लूटमार और ख़ून-ख़राबा करते देखकर उसका दिल दुखता है और वह लड़ाइयों के मौक़े पर सुलह-सफ़ाई कराने की कोशिश करता है। दिल ऐसा नर्म है कि हर एक के दुख-दर्द में शरीक होता है। यतीम बच्चों और बेवा औरतों की मदद करता है। भूखों को खाना खिलाता है और मुसाफ़िरों की ख़िदमत करता है। किसी को उससे दुख नहीं पहुँचता और वह ख़ुद दूसरों के लिए दुख उठाता है। फिर अक़्ल ऐसी सही है कि बुतपरस्तों की क़ौम में रहकर भी वह बुतों से नफ़रत करता है। कभी किसी चीज़ के आगे सिर नहीं झुकाता। उसके अन्दर अपने-आप आवाज़ आती है कि ज़मीन और आसमान में जितनी चीज़ें नज़र आती हैं उनमें से कोई पूजने लायक़ नहीं। उसका दिल आप-से-आप कहता है कि ख़ुदा तो एक ही हो सकता है और एक ही है। उस जाहिल क़ौम में यह शख़्स ऐसा मुमताज़ नज़र आता है जैसे पत्थरों के ढेर में एक हीरा चमक रहा है या घुप अँधेरे में एक चिराग़ रौशन है।

लगभग चालीस साल तक ऐसी पाक-साफ़ और ऊँचे दर्जे की शरीफ़ाना ज़िन्दगी बसर करने के बाद यह शख़्स उस अँधेरे से घबरा उठता है, जो उसके चारों तरफ़ फैला हुआ था। जिहालत, बदअख़लाक़ी, बदकिरदारी, बदइन्तिज़ामी और शिर्को-बुतपरस्ती के इस हौलनाक समुद्र से, जो उसे घेरे हुए था, वह निकल भागना चाहता है, क्योंकि यहाँ कोई चीज़ भी उसकी तबीअत से मेल नहीं खाती। आख़िर वह आबादी से दूर एक पहाड़ के ग़ार (गुफा) में जाकर बैठने लगता है और इस तन्हाई और सुकून के माहौल में कई-कई दिन गुज़ारता है। रोज़े रखकर अपनी रूह और दिलो-दिमाग़ को ज़्यादा पाक-साफ़ करता है। सोचता है, ग़ौरो-फ़िक्र करता है और कोई रौशनी ढूँढता है, जिससे चारों तरफ़ फैले हुए अँधेरे और गुमराही को दूर कर दे। ऐसी ताक़तवर चीज़ हासिल करना चाहता है जिससे बिगड़ी हुई दुनिया को

तोड़-फोड़कर फिर से सम्भाल दे।

यकायक उसकी हालत में एक भारी तब्दीली आती है। एकदम से उसके दिल में वह रौशनी आ जाती है जो इससे पहले उसमें न थी, जिसको उसकी फ़ितरत माँग रही थी। अचानक उसके अन्दर वह ताक़त आ जाती है जो इससे पहले उसमें न थी। वह ग़ार से निकलकर अपनी क़ौम के पास आता है। उससे कहता है कि बुत किसी काम के नहीं, इन्हें छोड़ दो। यह ज़मीन, यह चाँद, यह सूरज, ये तारे, ये ज़मीन और आसमान की सारी चीज़ें एक ख़ुदा की पैदा की हुई हैं। वही तुम्हारा पैदा करनेवाला है। वही रोज़ी देनेवाला है, वही मारने और जिलानेवाला है। सबको छोड़कर उसी को पूजो। सबको छोड़कर उसी से अपनी हाजतें माँगो। यह चोरी, यह लूटमार, यह शराब, यह जूआ, यह बदकारी जो तुम करते हो, सब गुनाह हैं, इन्हें छोड़ दो, क्योंकि ख़ुदा इन चीज़ों को पसन्द नहीं करता। सच बोलो, इनसाफ़ करो, न किसी की जान लो न किसी का माल छीनो, जो कुछ लो हक़ के साथ लो, जो कुछ दो हक़ के साथ दो। तुम सब इनसान हो और इसलिए सब बराबर हो। बड़ाई और शराफ़त इनसान की नस्ल और ख़ानदान में नहीं, रंग-रूप और माल-दौलत में नहीं, बल्कि ख़ुदापरस्ती, नेकी और पाकीज़गी में है। जो शख़्स ख़ुदा से डरता है, नेक और पाक है, वही ऊँचे दर्जे का इनसान है। जो ऐसा नहीं, वह कुछ भी नहीं। मरने के बाद तुम सबको ख़ुदा के सामने हाज़िर होना है। उस इनसाफ़ करनेवाले के यहाँ न कोई सिफ़ारिश काम आएगी और न कोई रिश्वत चलेगी और न किसी का ख़ानदान पूछा जाएगा। वहाँ सिर्फ़ ईमान और नेक अमल की पूछ होगी। जिसके पास यह सामान होगा वह जन्नत में जाएगा और जिसके पास इनमें से कुछ न होगा, वह बदक़िस्मत दोज़ख़ में डाला जाएगा।

जाहिल क़ौम ने उस नेक इनसान को सिर्फ़ इसलिए सताना शुरू किया कि वह ऐसी बातों को बुरा क्यों कहता है जो बाप-दादा के वक़्तों से होती चली आ रही है, और उन बातों की तालीम क्यों देता है जो बुज़ुर्गों के तरीक़े के ख़िलाफ़ हैं। उन्होंने उसे गालियाँ दीं, पत्थर मारे, उसके लिए जीना मुश्किल कर दिया। उसके क़त्ल की साज़िशें कीं। एक-दो दिन नहीं तेरह

ाल तक सख़्त-से-सख़्त ज़ुल्म तोड़े। यहाँ तक कि उसे वतन छोड़ने पर ‌जबूर कर दिया। और फिर वतन से निकालकर भी दम न लिया, जहाँ उसने नाह ली थी वहाँ भी उसको कई साल तक परेशान करते रहे।

ये सब तकलीफ़ें उस नेक इनसान ने क्यों उठाईं। सिर्फ़ इसलिए कि वह ‌पनी क़ौम को सीधा रास्ता बताना चाहता था। उसकी क़ौम उसको ‌ादशाह बनाने को तैयार थी, दौलत के ढेर उसके क़दमों पर डालने को ‌ामादा थी, इस शर्त पर कि वह अपनी तालीम से रुक जाए। मगर उसने ‌न सब चीज़ों को ठुकरा दिया और अपनी बात पर डटा रहा। इससे बढ़कर ‌ेक दिली और सच्चाई और क्या हो सकती है कि कोई शख़्स अपने फ़ायदे ‌े लिए नहीं बल्कि सिर्फ़ दूसरों के भले के लिए तकलीफ़ें उठाए। वही लोग ‌जेनके फ़ायदे के लिए वह कोशिश कर रहा है उसको पत्थर मारते हैं और ‌वह उनके लिए भलाई की दुआ करता है। इनसान तो क्या फ़रिश्ते भी उसकी नेकी पर क़ुरबान जाएँ।

फिर देखिए, जब यह शख़्स ग़ार से यह तालीम लेकर निकला तो उसमें कितना बड़ा इंक़िलाब हो गया। अब जो कलाम वह सुना रहा था वह ऐसा शानदार था कि किसी ने न उससे पहले ऐसा कलाम कहा, न उसके बाद कोई कह सका। अरबवालों को अपनी शायरी और अपने कलाम पर बड़ा नाज़ था। उसने अरबों से कहा कि तुम इस कलाम जैसी एक ही सूरत बना लाओ, मगर सबकी गरदनें बेबसी से झुक गईं। हद यह है कि ख़ुद उस शख़्स की आम बोल-चाल और तक़रीर की ज़बान भी उस दर्जे की न थी जो उस ख़ास कलाम की थी। आज भी हम जब उसकी दूसरी तक़रीरों का मुक़ाबला उस कलाम से करते हैं तो दोनों में साफ़ फ़र्क़ महसूस होता है।

रेगिस्तान में रहनेवाले उस उम्मी (अनपढ़) इनसान ने हिकमत और सूझ-बूझ की ऐसी बातें कहनी शुरू कीं कि न उससे पहले किसी इनसान ने कही थीं, न उसके बाद कोई कह सका, न चालीस बरस की उम्र से पहले ख़ुद उसकी ज़बान से वह कभी सुनी गई थीं।

उस उम्मी ने अख़लाक़, मुआशरत, मईशत, सियासत और इनसानी ज़िन्दगी के तमाम मामलों के बारे में ऐसे क़ानून बनाए कि बड़े-बड़े पढ़े-लिखे

बरसों के सोच-विचार और सारी उम्र के तजरिबात के बाद भी बड़ी मुश्किल से इनकी हिकमतों को समझ सकते हैं और दुनिया के तजरिबात जितने बढ़ते जाते हैं, इनकी हिकमतें और ज़्यादा खुलती जाती हैं। चौदह सौ साल से ज़्यादा मुद्दत गुज़र चुकी है, मगर आज भी उसके बनाए हुए क़ानून में किसी तब्दीली की ज़रूरत नज़र नहीं आती। दुनिया के क़ानून हज़ारों बार बने और बिगड़े और नाकाम हुए और हर बार उनको बदलना पड़ा, मगर इस सहरा-नशीन उम्मी ने अकेले बग़ैर किसी दूसरे इनसान की मदद के जो क़ानून बना दिए उनकी कोई एक 'दफ़ा' भी ऐसी नहीं जो अपनी जगह से हटाई जा सके।

उसने तेईस साल की मुद्दत में अपने अख़लाक़, अपनी नेकी और शराफ़त और अपनी ऊँची तालीम के ज़ोर से अपने दुश्मनों को दोस्त बनाया, बड़ी-बड़ी ताक़तें उसके मुक़ाबले में उठीं और हारकर उसके क़दमों में आ गिरीं। उसने जब फ़त्ह पाई तो किसी दुश्मन से उसने बदला न लिया, किसी पर सख़्ती न की। जिन्होंने उसके सगे चचा को क़त्ल किया था और उसका कलेजा निकालकर चबा गए थे, उनको भी फ़त्ह पाकर उसने माफ़ कर दिया। जिन्होंने उसको पत्थर मारे थे और वतन से निकाला था, उनको भी फ़त्ह पाकर माफ़ कर दिया। उसने कभी किसी से दग़ा न की, अहद करके कभी न तोड़ा, जंग में भी किसी पर ज़्यादती न की, उसके कट्टर दुश्मन भी कभी उसपर किसी गुनाह या ज़ुल्म का इलज़ाम न रख सके। यही नेकी थी जिसने आख़िरकार तमाम अरब का दिल मोह लिया। फिर उसने अपनी तालीम और हिदायत से उन्हीं अरबों को जिनका हाल आप ऊपर पढ़ चुके हैं, जंगलीपन और जिहालत से निकालकर एक मुहज़्ज़ब और बाअख़लाक़ क़ौम बना दिया। जो अरब किसी क़ानून की पाबन्दी को तैयार न थे, उनको उसने क़ानून का ऐसा पाबन्द बना दिया कि दुनिया की तारीख़ में कोई दूसरी क़ौम क़ानून की इतनी पाबन्द नज़र नहीं आती। जो अरब किसी का हुक्म मानने को तैयार न थे उसने उनको एक अज़ीम सल्तनत का ताबेअ बना दिया। जिन लोगों को अख़लाक़ की हवा तक न लगी थी उनके अख़लाक़ इतने पाकीज़ा बना दिए कि आज उनके हालात पढ़कर दुनिया दंग रह जाती

है। जो अरब उस वक़्त की क़ौमों में सबसे गिरे हुए थे वे उस अकेले इनसान के असर से तेइस साल के अन्दर यकायक ऐसे उठे कि उन्होंने ईरान, रूम और मिस्र की बड़ी-बड़ी हुकूमतों के तख़्ते उलट दिए। दुनिया को तहज़ीब, अख़लाक़ और इनसानियत का सबक़ दिया और इस्लाम की एक तालीम और एक शरीअत को लेकर एशिया, अफ़्रीक़ा और यूरोप के दूर-दराज़ हिस्सों तक फैलते चले गए।

ये तो वे असरात हैं जो अरब की क़ौम पर हुए। इनसे ज़्यादा हैरत-भरे असरात उस उम्मी की तालीम से पूरी दुनिया पर हुए। उसने सारी दुनिया के ख़यालात, आदतों और क़ानूनों में इंक़िलाब पैदा कर दिया। उनको तो छोड़ दीजिए जिन्होंने उसको अपना रहनुमा ही मान लिया है, मगर हैरत यह है कि जिन्होंने उसकी पैरवी से इनकार किया, जो उसके मुख़ालिफ़ और दुश्मन हैं वे भी उसके असर से न बच सके। दुनिया तौहीद का सबक़ भूल गई थी, उसने यह सबक़ फिर याद दिलाया और इतने ज़ोर के साथ उसका सूर फूँका कि आज बुतपरस्तों और मुशरिकों के मज़हब भी तौहीद का दावा करने पर मजबूर हो गए हैं। उसने अख़लाक़ की ऐसी ज़बरदस्त तालीम दी कि उसके बनाए हुए उसूल सारी दुनिया में फैल गए और फैलते जा रहे हैं। उसने क़ानून और सियासत और तहज़ीब और मुआशरत के जो उसूल बताए वे ऐसे पक्के और सच्चे उसूल थे कि मुख़ालिफ़ों ने भी चुपके-चुपके उनसे फ़ायदा उठाना शुरू कर दिया और आज तक उठा रहे हैं।

जैसा कि आपको ऊपर बताया जा चुका है कि यह शख़्स एक जाहिल क़ौम और एक बहुत पिछड़े मुल्क में पैदा हुआ था। चालीस साल की उम्र तक बकरियाँ चराने और सौदागरी के सिवा उसने कोई काम न किया था, किसी क़िस्म की तालीम और तरबियत भी उसने न पाई थी। मगर ग़ौर कीजिए, चालीस साल की उम्र को पहुँचने के बाद कहाँ से उसके अन्दर यकायक इतने कमाल जमा हो गए? कहाँ से उसके पास ऐसा इल्म आ गया? कहाँ से उसमें यह ताक़त पैदा हो गई? एक अकेला इनसान है और एक ही वक़्त में बेमिसाल कमाण्डर भी है, आला दर्जे का जज भी है, एक ज़बरदस्त क़ानूनदाँ भी है, एक बेमिसाल फ़िलासफ़र भी है, एक लाजवाब

समाजी, अख़लाक़ी और तहज़ीबी इसलाह करनेवाला भी है, सियासत का एक माहिर भी है। फिर इन सबके साथ वह रातों को घंटों अपने ख़ुदा की इबादत भी करता है। अपनी बीवियों और बच्चों के हक़ भी अदा करता है। ग़रीबों और मुसीबतज़दों की ख़िदमत भी करता है। एक बड़े मुल्क की बादशाही मिल जाने पर भी वह एक फ़क़ीर की-सी ज़िन्दगी बसर करता है। चटाई पर सोता है, मोटा-झोटा पहनता है, ग़रीबों का-सा खाना खाता है, बल्कि कभी-कभी फ़ाक़े की भी नौबत आ जाती है।

ये हैरत-भरे कमाल दिखाकर अगर वह कहता कि मैं इनसान से ऊपर की हस्ती हूँ तब भी उसके दावे को कोई चैलेंज न कर सकता था। मगर आप जानते हैं कि उसने क्या कहा? उसने यह कहा कि मेरे पास अपना कुछ भी नहीं, सब कुछ ख़ुदा का है और ख़ुदा की तरफ़ से है। मैंने जो कलाम पेश किया है, जिसकी मिसाल लाने से सारे इनसान मजबूर हैं, यह मेरा कलाम नहीं है, न मेरे दिमाग़ की क़ाबिलियत का नतीजा है। यह ख़ुदा का कलाम है और उसकी सारी तारीफ़ ख़ुदा के लिए है। मेरे जितने काम हैं, अपनी क़ाबिलियत से नहीं हैं, सिर्फ़ ख़ुदा की हिदायत से हैं। उधर से जो इशारा होता है वही करता हूँ और कहता हूँ। अब ऐसे सच्चे इनसान को पैग़म्बर कैसे न माना जाए! उसके कमाल ऐसे हैं कि दुनिया में शुरुआत से लेकर आज तक एक इनसान भी उस जैसा नहीं मिलता, मगर उसकी सच्चाई ऐसी है कि वह उनपर फ़ख़्र नहीं करता, उनकी तारीफ़ ख़ुद हासिल करना नहीं चाहता, बल्कि जिसने यह सब कुछ दिया है, साफ़-साफ़ उसी का हवाला देता है। क्या वजह है कि हम उसकी तसदीक़ न करें? जब वह ख़ुद अपनी ख़ूबियों के बारे में कहता है कि ये ख़ुदा की दी हुई हैं तो हम क्यों कहें कि नहीं ये सब तेरे दिमाग़ की पैदावार हैं। झूठा आदमी तो दूसरों की ख़ूबियों को भी अपनी बताने की कोशिश करता है। मगर यह शख़्स उन ख़ूबियों को भी अपनी नहीं बताता जिन्हें वह आसानी से अपनी ख़ूबियाँ कह सकता था। जिनके हासिल होने का ज़रिआ किसी को मालूम भी नहीं हो सकता था। जिनकी वजह से अगर वह इनसान से ऊँचा होने का दावा करता, तो कोई उसके दावे को ग़लत न कह सकता था। फिर बताइए कि उससे ज़्यादा

च्चा इनसान कौन होगा?

देखिए, ये हैं हमारे सरकार, सारे जहान के पैग़म्बर 'हज़रत मुहम्मद स्तफ़ा' (सल्ल॰)। उनकी पैग़म्बरी की दलील ख़ुद उनकी सच्चाई है। उनके ज़ीमुश्शान कारनामे, उनके अख़लाक़, उनकी पाक ज़िन्दगी के हालात, ब तारीख़ से साबित हैं। जो शख़्स साफ़ दिल से हक़पसन्दी और इनसाफ़ ; साथ उनको पढ़ेगा, उसका दिल ख़ुद गवाही देगा कि वे ज़रूर ख़ुदा के ग़म्बर हैं। वह कलाम जो उन्होंने पेश किया वह यही क़ुरआन है जिसे आप ढ़ते हैं। इस बेमिसाल किताब को जो शख़्स भी समझकर खुले दिल से ढ़ेगा, उसको मानना पड़ेगा कि यह ज़रूर ख़ुदा की किताब है। कोई भी नसान ऐसी किताब लिख ही नहीं सकता।

ख़त्मे-नुबूवत

अब आपको जानना चाहिए कि इस ज़माने में इस्लाम का सच्चा और ीधा रास्ता मालूम करने का कोई ज़रिआ हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की ालीम और क़ुरआन मजीद के सिवा नहीं है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) सारे नसानों के लिए ख़ुदा के पैग़म्बर हैं। उनपर पैग़म्बरी का सिलसिला ख़त्म र दिया गया। अल्लाह तआला इनसान को जितनी हिदायत करना चाहता ा वह सब-की-सब उसने अपने आख़िरी पैग़म्बर के ज़रिए भेज दी। अब ो शख़्स हक़ का तलबगार हो और ख़ुदा का मुस्लिम बन्दा बनना चाहता ो, उसपर लाज़िम है कि ख़ुदा के आख़िरी पैग़म्बर पर ईमान लाए। जो कुछ ालीम उन्होंने दी है उसको माने और जो तरीक़ा उन्होंने बताया है उसकी रवी करे।

ुबूवत के ख़त्म होने की दलीलें

पैग़म्बरी की हक़ीक़त आपको ऊपर बताई जा चुकी है। उसको समझने ौर उसपर ग़ौर करने से आपको ख़ुद मालूम हो जाएगा कि पैग़म्बर ोज़-रोज़ पैदा नहीं होते, न यह ज़रूरी है कि हर क़ौम के लिए हर वक़्त एक ैग़म्बर हो। पैग़म्बर की ज़िन्दगी अस्ल में उसकी तालीम और हिदायत की ज़िन्दगी है। जब तक कि उसकी तालीम और हिदायत ज़िन्दा है उस वक़्त

तक वह एक तरह से ख़ुद ज़िन्दा है। इस लिहाज़ से पिछले पैग़म्बरों की ज़िन्दगी ख़त्म हो गई, क्योंकि जो तालीम उन्होंने दी थी दुनिया ने उसको बदल डाला, जो किताबें वे लाए थे उनमें से एक भी आज अस्ली सूरत में मौजूद नहीं। ख़ुद उनके माननेवाले भी यह दावा नहीं कर सकते कि हमारे पास पैग़म्बरों की दी हुई अस्ली किताबें मौजूद हैं। उन्होंने अपने पैग़म्बरों की सीरतों और ज़िन्दगी के हालात को भी भुला दिया। पिछले पैग़म्बरों में से एक के भी सही सच्चे हालात आज कहीं नहीं मिलते। यह भी यक़ीन के साथ नहीं कहा जा सकता कि वे किस ज़माने में पैदा हुए, कहाँ पैदा हुए, क्या काम उन्होंने किए, किस तरह ज़िन्दगी बसर की, किन बातों की तालीम दी और किन बातों से रोका? यही उनका ख़ात्मा है। इस हैसियत से वे ज़िन्दा नहीं, मगर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ज़िन्दा हैं, क्योंकि उनकी तालीम और हिदायत ज़िन्दा है। जो क़ुरआन उन्होंने दिया था वह अपने अस्ली लफ़्ज़ों के साथ मौजूद है। उसमें एक हर्फ़, एक नुक़्ते, एक ज़ेर-ज़बर का भी फ़र्क़ नहीं आया। उनकी (हज़रत मुहम्मद सल्ल० की) ज़िन्दगी के हालात, उनकी बातें और फ़रमान उनके अमल सब-के-सब महफ़ूज़ हैं, और चौदह सौ बरस से ज़्यादा मुद्दत गुज़र जाने के बाद भी तारीख़ में उनका नक़्शा ऐसा साफ़ नज़र आता है कि जैसे हम ख़ुद नबी (सल्ल०) को देख रहे हैं। दुनिया के किसी शख़्स की ज़िन्दगी भी इतनी महफ़ूज़ नहीं जितनी आप (सल्ल०) की ज़िन्दगी महफ़ूज़ है। हम अपनी ज़िन्दगी के हर मामले में हर वक़्त आप (सल्ल०) की ज़िन्दगी से सबक़ ले सकते हैं, यही इस बात की दलील है कि आप (सल्ल०) के बाद किसी दूसरे पैग़म्बर की ज़रूरत नहीं।

एक पैग़म्बर के बाद दूसरे पैग़म्बर के आने की सिर्फ़ तीन वजह हो सकती हैं—

1. या तो पहले पैग़म्बर की तालीम और हिदायत मिट गई हो और उसको फिर पेश करने की ज़रूरत हो।
2. या पहले पैग़म्बर की तालीम अधूरी हो और उसमें तबदीली और इज़ाफ़े की ज़रूरत हो।
3. या पहले पैग़म्बर की तालीम एक ख़ास क़ौम के लिए ही हो और दूसरी

क़ौम के लिए पैग़म्बर की ज़रूरत हो।[1]

ये तीनों वजहें अब बाक़ी न रहीं।

1. हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की तालीम और हिदायत ज़िन्दा है और वे ज़रिए पूरी तरह महफ़ूज़ हैं जिनसे हर वक़्त मालूम किया जा सकता है कि आप (सल्ल॰) का दीन क्या था? आप क्या हिदायत लेकर आए थे? ज़िन्दगी के किस तरीक़े को आपने राइज किया और किन तरीक़ों को आपने मिटाने और बन्द करने की कोशिश फ़रमाई? तो जब आपकी तालीम मिटी ही नहीं तो उसको नए सिरे से पेश करने के लिए किसी नबी के आने की ज़रूरत नहीं है।
2. नबी (सल्ल॰) के ज़रिए से दुनिया को इस्लाम की पूरी तालीम दी जा चुकी है। अब न उसमें कुछ घटाने-बढ़ाने की ज़रूरत है और न कोई ऐसी कमी रह गई है जिसको दूर करने के लिए किसी नबी के आने की ज़रूरत हो। इस तरह दूसरी वजह दूर हो गई।
3. नबी (सल्ल॰) किसी ख़ास क़ौम के लिए नहीं बल्कि सारी दुनिया के लिए नबी बनाकर भेजे गए हैं और तमाम इनसानों के लिए आप (सल्ल॰) की तालीम काफ़ी है। इसलिए अब किसी ख़ास क़ौम के लिए अलग नबी के आने की भी ज़रूरत नहीं है। इस तरह तीसरी वजह भी दूर हो गई।

इसी लिए हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को 'ख़ातमुन्नबीयीन' कहा गया है, यानी नुबूवत के सिलसिले को ख़त्म करनेवाले। अब दुनिया को किसी दूसरे नबी की ज़रूरत नहीं है, बल्कि सिर्फ़ ऐसे लोगों की ज़रूरत है जो आप (सल्ल॰) के तरीक़े पर खुद चलें और दूसरों को चलाएँ, आप (सल्ल॰) की तालीम को समझें, उनपर अमल करें और दुनिया में उस क़ानून की हुकूमत क़ायम करें जिसको लेकर आप (सल्ल॰) तशरीफ़ लाए थे।

---

1. एक चौथी वजह यह भी हो सकती है कि पैग़म्बर की मौजूदगी में उसकी मदद के लिए दूसरा पैग़म्बर भेजा जाए। लेकिन हमने उसका ज़िक्र इसलिए नहीं किया कि क़ुरआन मजीद में उसकी सिर्फ़ दो मिसालें हैं, जिससे यह नतीजा निकलता है कि पैग़म्बर की मदद के लिए दूसरा पैग़म्बर भेजने का कोई आम क़ायदा अल्लाह तआला के यहाँ नहीं है।

(4)
ईमान की तफ़सील

आगे बढ़ने से पहले आपको एक बार फिर उन मालूमात को देख लेन चाहिए जो आपको अब तक हासिल हुई हैं।

1. हालाँकि इस्लाम के मानी खुदा की इताअत और फ़रमाँबरदारी वे हैं, लेकिन चूँकि खुदा की ज़ात और सिफ़ात और उसकी मर्ज़ी के मुताबिद ज़िन्दगी बसर करने का तरीक़ा और आख़िरत की जज़ा और सज़ा का सह हाल सिर्फ़ खुदा के पैग़म्बर ही के ज़रिए मालूम हो सकता है, इसलिए इस्ला मज़हब की सही तारीफ़ यह हुई कि "पैग़म्बर की तालीम पर ईमान लान और उसके बताए हुए तरीक़े पर खुदा की बन्दगी करना, इस्लाम है।" ज शख़्स पैग़म्बर के वास्ते को छोड़कर सीधे खुदा की इताअत और फ़रमाँबरदा का दावा करे वह मुस्लिम नहीं है।

2. पुराने ज़माने में अलग-अलग क़ौमों के लिए अलग-अलग पैग़म्ब आते थे और एक ही क़ौम में एक के बाद दूसरे कई पैग़म्बर आया करते थे उस वक़्त हर क़ौम के लिए 'इस्लाम' उस मज़हब का नाम था जो ख़ास उस क़ौम के पैग़म्बर या पैग़म्बरों ने सिखाया। यूँ तो इस्लाम की हक़ीक़त ह मुल्क और ज़माने में एक ही थी, मगर शरीअतें यानी क़ानून और इबाद के तरीक़े कुछ अलग थे, इसलिए एक क़ौम पर दूसरी क़ौम के पैग़म्बरों क पैरवी ज़रूरी न थी, जबकि ईमान लाना सब पर ज़रूरी था।

3. हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) जब पैग़म्बर बनाकर भेजे गए तो आ (सल्ल.) के ज़रिए से इस्लाम की तालीम को मुकम्मल कर दिया गया औ तमाम दुनिया के लिए एक ही शरीअत भेजी गई। आप (सल्ल.) की नुबूव किसी ख़ास मुल्क या क़ौम के लिए नहीं बल्कि तमाम इनसानों के लिए और हमेशा के लिए है। इस्लाम की जो शरीअतें पिछले पैग़म्बरों ने पेश व थीं वे सब हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के आने पर ख़त्म कर दी गईं और अ

क़ियामत तक न कोई नबी आनेवाला है और न कोई दूसरी शरीअत ख़ुदा की तरफ़ से उतरनेवाली है। इसलिए अब 'इस्लाम' सिर्फ़ हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की पैरवी का नाम है। आप (सल्ल॰) की नुबूवत को तसलीम करना और आप (सल्ल॰) के एतिमाद पर उन सब बातों को मानना जिन पर ईमान लाने की आप (सल्ल॰) ने तालीम दी है और आप (सल्ल॰) के तमाम हुक्मों को ख़ुदा का हुक्म समझकर उनकी इताअत करना इस्लाम है। अब कोई और ऐसा शख़्स ख़ुदा की तरफ़ से आनेवाला नहीं है जिसको मानना मुसलमान होने के लिए ज़रूरी हो, और जिसे न मानने से आदमी काफ़िर हो जाता है।

आइए अब हम आपको बताएँ कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने किन-किन बातों पर ईमान लाने की तालीम दी है, वे कैसी सच्ची बातें हैं, उनको मानने से इनसान का दर्जा कितना ऊँचा हो जाता है।

अल्लाह पर ईमान

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की सबसे पहली और सबसे ज़्यादा अहम तालीम यह है : "ला इला-ह इल्लल्लाह" (अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' नहीं)।

यह कलिमा इस्लाम की बुनियाद है। जो चीज़ मुस्लिम को एक काफ़िर, एक मुशरिक, और एक दहरिये[1] से अलग करती है वह यही है। इसी कलिमे के इक़रार या इनकार से इनसान और इनसान में बहुत बड़ा फ़र्क़ हो जाता है। इसको माननेवाले एक गरोह बन जाते हैं और न माननेवाले दूसरा गरोह। इसके माननेवालों के लिए दुनिया से लेकर आख़िरत तक तरक़्क़ी, कामयाबी, बुलन्दी और इज़्ज़त है और न माननेवालों के लिए नाकामी, ज़िल्लत और पस्ती।

इतना बड़ा फ़र्क़ जो इनसान और इनसान के बीच हो जाता है यह कुछ लफ़्ज़ों से बने हुए एक छोटे से जुमले को ज़बान से कह देने का नतीजा नहीं है। ज़बान से अगर आप दस लाख बार दवाई, दवाई पुकारते रहें और खाएँ

1. अल्लाह के वजूद को न माननेवाले, नास्तिक।

नहीं, तो आपकी बीमारी न जाएगी। इसी तरह अगर ज़बान से 'ला इला-ह इल्लल्लाह' कह दिया, मगर यह न समझे कि इसका मतलब क्या है और इन लफ़्ज़ों को कहकर आपने कितनी बड़ी चीज़ का इक़रार किया है और इस इक़रार से आपपर कितनी बड़ी ज़िम्मेदारी आ गई है, तो इन लफ़्ज़ों के कहने का कोई फ़ायदा नहीं है। अस्ल में, फ़र्क़ तो उसी वक़्त होगा जब 'ला इला-ह इल्लल्लाह' का मतलब आपके दिल में उतर जाए, और उसके मानी पर आपको पूरा यक़ीन हो जाए, उसके ख़िलाफ़ जितने ख़यालात हैं उनसे आपका दिल बिलकुल पाक हो जाए। इस कलिमे का असर आपके दिल और दिमाग़ पर कम-से-कम इतना गहरा हो जितना इस बात का असर है कि आग जलानेवाली चीज़ है और ज़हर मार डालनेवाली चीज़। जिस तरह आग की ख़ासियत पर ईमान आपको चूल्हे में हाथ डालने से रोकता है और ज़हर की ख़ासियत पर ईमान आपको ज़हर खाने से रोकता है, इसी तरह 'ला इला-ह इल्लल्लाह' पर ईमान आपको शिर्क और कुफ़्र और दहरियत की हर छोटी-से-छोटी बात पर भी रोक दे, चाहे वह अक़ीदे की हो या अमल की।

'ला इला-ह इल्लल्लाह' का मतलब

सबसे पहले यह समझिए कि 'इलाह' किसे कहते हैं। अरबी ज़बान में 'इलाह' के मानी 'इबादत के लायक़' के हैं। यानी ऐसी हस्ती जो अपनी शान, जलाल और बड़ाई के लिहाज़ से इस क़ाबिल हो कि उसकी परस्तिश और पूजा की जाए और बन्दगी और इबादत में उसके आगे सिर झुका दिया जाए। 'इलाह' के मानी में यह मतलब भी शामिल है कि वह बड़ी क़ुदरत का मालिक हो जिसकी बड़ाई समझने में इनसान की अक़्ल हैरान रह जाए। 'इलाह' के मानी में यह बात भी दाख़िल है कि वह ख़ुद किसी का मुहताज न हो और सब अपनी ज़िन्दगी के मामलों में उसके मुहताज हों और उससे मदद माँगने के लिए मजबूर हों। 'इलाह' के लफ़्ज़ में 'छिपे हुए' के मानी भी पाए जाते हैं, यानी इलाह उसे कहेंगे जिसकी ताक़तें राज़ से भरी और छिपी हुई हों। फ़ारिसी में 'ख़ुदा' और हिन्दी में 'देवता' और अंग्रेज़ी में 'गॉड' के मानी भी इससे मिलते-जुलते हैं। दुनिया की दूसरी ज़बानों में भी इस मतलब के लिए ख़ास लफ़्ज़ पाए जाते हैं।

लफ़्ज़ 'अल्लाह' अस्ल में 'उस एक अकेली हस्ती जिसका कोई शरीक हीं' का ख़ास ज़ाती नाम (Personal Name) है। इस तरह 'ला इला-ह ल्लल्लाह' का लफ़्ज़ी तर्जमा यह होगा, 'कोई इलाह नहीं है सिवाय उस ख़ास ज़ात के जिसका नाम अल्लाह है।' मतलब यह है कि पूरी कायनात में अल्लाह के सिवा कोई एक हस्ती भी ऐसी नहीं है जो पूजने के लायक़ हो, उसके सिवा कोई इसका हक़ नहीं रखता कि इबादत और बन्दगी और ताअत में उसके आगे सिर झुकाया जाए। सिर्फ़ वही एक ज़ात सारे जहान की मालिक और हाकिम है, तमाम चीज़ें उसकी मुहताज हैं, सब उसी से मदद माँगने पर मजबूर हैं, उसकी ज़ात हमारी समझ से परे है और उसकी हस्ती को समझने में अक़्ल दंग है।

'ला इला-ह इल्लल्लाह' की हक़ीक़त

यह तो सिर्फ़ लफ़्ज़ों का मतलब था, अब उसकी हक़ीक़त को समझने की कोशिश कीजिए।

इनसान की पुरानी-से-पुरानी तारीख़ के हालात और पुरानी-से-पुरानी क़ौमों की निशानियों को देखने से मालूम होता है कि इनसान ने हर ज़माने में किसी-न-किसी को ख़ुदा माना है और किसी-न-किसी की इबादत ज़रूर की है। अब भी दुनिया में जितनी क़ौमें हैं, चाहे वे बिलकुल जंगली हों या बहुत तरक़्क़ी-याफ़्ता, उन सब में यह बात मौजूद है कि वे किसी को ख़ुदा मानती हैं और उसकी इबादत करती हैं। इससे मालूम हुआ कि इनसान की फ़ितरत में ख़ुदा का ख़याल बैठा हुआ है, उसके अन्दर कोई ऐसी चीज़ है जो उसे मजबूर करती है कि किसी को ख़ुदा माने और उसकी इबादत करे।

सवाल पैदा होता है कि वह क्या चीज़ है? आप ख़ुद अपनी हस्ती पर और तमाम इनसानों की हालत पर नज़र डालकर इस सवाल का जवाब मालूम कर सकते हैं।

इनसान, अस्ल में बन्दा और गुलाम ही पैदा हुआ है, वह फ़ितरी तौर पर मुहताज है, कमज़ोर है, फ़क़ीर है। अनगिनत चीज़ें उसकी हस्ती को बरक़रार रखने के लिए ज़रूरी हैं, मगर उनपर उसे पूरा इख़्तियार नहीं है।

आप-से-आप उसको हासिल भी होती हैं और उससे छिन भी जाती हैं।

बहुत-सी चीज़ें हैं जो उसके लिए फ़ायदेमन्द हैं, वह उनको हासि करना चाहता है, मगर कभी वह उसको मिल जाती हैं और कभी नह मिलतीं, क्योंकि उनको हासिल करना पूरी तरह उसके बस में नहीं है।

बहुत-सी चीज़ें हैं जो उसको नुक़सान पहुँचाती हैं, उसकी उम्र-भर व मेहनत को आन-की-आन में बरबाद कर देती हैं, उसकी आरज़ुओं को मिट्ट में मिला देती हैं, उसको बीमारी और तबाही में डाल देती हैं। वह उन छुटकारा पाना चाहता है। कभी छुटकारा मिल जाता है और कभी नहीं भ मिलता। इससे वह समझ लेता है कि इनका आना और न आना और इन छुटकारा मिलना या न मिलना उसके बस से बाहर है।

बहुत-सी चीज़ें हैं जिनकी शानो-शौकत और बड़ाई को देखकर व अपने को कमतर समझता है। पहाड़ों को देखता है, दरियाओं और समुद्र क देखता है, बड़े-बड़े भयानक जानवरों को देखता है, हवाओं के तूफ़ान औ पानी के सैलाब और ज़मीन के ज़लज़ले देखता है, बादलों की गरज औ घटाओं की सियाही और बिजली की कड़क-चमक और मूसलाधार बारिश वे मंज़र उसके सामने आते हैं। सूरज, चाँद और तारे उसको गरदिश करते हु दिखाई देते हैं। वह देखता है कि ये सब चीज़ें कितनी बड़ी, कितनी ताक़तवर, कितनी शानदार हैं और इनके मुक़ाबले में वह ख़ुदा कितन कमज़ोर, छोटा और कमतर है।

ये तरह-तरह के नज़ारे और ख़ुद अपनी मजबूरियों और बेबसी क देखकर उसके दिल में आप-से-आप अपनी बन्दगी, ग़ुलामी, मुहताजी औ कमज़ोरी का एहसास पैदा हो जाता है और इस एहसास के साथ ही आप से-आप ख़ुदा का तसव्वुर भी पैदा हो जाता है। वह उन हाथों का ख़याल करता है जो इतनी बड़ी ताक़तों के मालिक हैं। उनकी बड़ाई का एहसास उसे मजबूर करता है कि वह उनकी इबादत में सिर झुका दे। उनकी ताक़त का एहसास उसे मजबूर करता है कि वह उनके आगे अपनी लाचारी औ बेबसी पेश करे। उनकी फ़ायदा पहुँचानेवाली ताक़तों का एहसास उसे मजबू करता है कि वह उनके आगे ज़रूरत पूरी कराने और दुख दूर कराने के लिए

हाथ फैलाए। उनकी नुक़सान पहुँचानेवाली ताक़तों का एहसास उसे मजबूर करता है कि वह उनसे डरे और उनके ग़ज़ब और ग़ुस्से से बचे।

जिहालत और नादानी के सबसे निचले दर्जे में इनसान यह समझता है कि जो चीज़ें उसको शान और ताक़तवाली नज़र आती हैं या किसी तरह फ़ायदा या नुक़सान पहुँचाती हुई महसूस होती हैं, ये ही ख़ुदा हैं। इसलिए वह जानवरों और नदियों और पहाड़ों को पूजता है, ज़मीन को पूजता है, आग और बारिश और हवा, चाँद और सूरज की इबादत करने लगता है।

यह जिहालत जब ज़रा कम होती है और कुछ इल्म की रौशनी आती है तो उसे मालूम होता है कि ये सब चीज़ें तो ख़ुद उसी की तरह मुहताज और कमज़ोर हैं। बड़े-से-बड़ा जानवर भी एक छोटे से मच्छर की तरह मरता है। बड़ी-बड़ी नदियाँ सूख जाती हैं, चढ़ती-उतरती रहती हैं। पहाड़ों को ख़ुद इनसान तोड़ता-फोड़ता है। ज़मीन का फलना-फूलना ख़ुद ज़मीन के अपने बस में नहीं। जब पानी उसका साथ नहीं देता तो वह सूख जाती है। पानी भी बेबस है और उसका बरसना हवा का मुहताज है। हवा भी अपने बस में नहीं और फिर उसका फ़ायदेमन्द या नुक़्सानदेह होना दूसरे सबब के तहत है। चाँद और सूरज और तारे भी किसी क़ानून के पाबन्द हैं। वे उस क़ानून की छोटी-सी ख़िलाफ़वर्ज़ी भी नहीं कर सकते। अब उसका ध्यान छिपी हुई और पुरअसरार (गुप्तमयी) ताक़तों की तरफ़ जाता है। वह सोचता है कि इन ज़ाहिरी चीज़ों के पीछे कुछ छिपी हुई ताक़तें हैं जो उनको चला रही हैं और सब कुछ उन्हीं के बस में है। यहीं से ख़ुदाओं और देवताओं का अक़ीदा पैदा होता है। रौशनी, हवा, पानी, बीमारी और सेहत और इसी तरह दूसरी चीज़ों के ख़ुदा अलग-अलग मान लिए जाते हैं और उनकी ख़याली सूरतें बनाकर, उनकी इबादतें की जाती हैं।

इसके बाद जब इल्म की रौशनी कुछ और आती है तो इनसान देखता है कि दुनिया के इन्तिज़ाम में एक ज़बरदस्त क़ानून और एक बड़े ज़ाब्ते (डिसिप्लिन) की पाबन्दी पाई जाती है। हवाओं की रफ़्तार, बारिश का होना, तारों की गरदिश, फ़सलों और मौसमों की तब्दीली में कैसी बाक़ायदगी है? किस तरह अनगिनत ताक़तें एक-दूसरे के साथ मिलकर काम कर रही हैं?

कैसा ज़बरदस्त क़ानून है कि जो वक़्त जिस काम के लिए तय कर दिया गय है, ठीक उसी वक़्त पर कायनात की तमाम ज़रूरी चीज़ें जमा हो जाती हैं और एक-दूसरे की मदद करती हैं। दुनिया के इन्तिज़ाम में यह एकत देखकर मुशरिक इनसान यह मानने पर मजबूर हो जाता है कि एक सबसे बड़ा ख़ुदा भी है जो इन तमाम छोटे-छोटे ख़ुदाओं पर हुकूमत कर रहा है, वरना अगर सब एक-दूसरे से अलग और बिलकुल आज़ाद हों तो दुनिया का सारे-का-सारा कारख़ाना दरहम-बरहम हो जाए। उसने इस बड़े ख़ुदा का नाम 'अल्लाह', 'परमेश्वर' 'ख़ुदाए-ख़ुदाएगाँ' (ख़ुदाओं का ख़ुदा), वग़ैरा रख लिया है, मगर इबादत में उसके साथ छोटे ख़ुदाओं को भी शरीक रखता है। वह समझता है कि ख़ुदाई भी दुनिया की बादशाही के नमूने पर है। जिस तरह दुनिया में एक बादशाह होता है और उसके बहुत-से वज़ीर, और नाज़िम और दूसरे बड़े उहदेदार होते हैं, इसी तरह कायनात में भी एक बड़ा ख़ुदा है और बहुत-से छोटे-छोटे ख़ुदा उसके मातहत हैं। जब तक छोटे ख़ुदाओं को ख़ुश न किया जाएगा बड़े ख़ुदा तक पहुँच न हो सकेगी। इसलिए उनकी इबादत भी करो, उनके आगे हाथ भी फैलाओ, उनकी नाराज़गी से भी डरो। उनको बड़े ख़ुदा तक पहुँचने का ज़रिआ बनाओ, नज़्रो-नियाज़ से उन्हें ख़ुश रखो।

फिर जब इल्म में और तरक़्क़ी होती है तो ख़ुदाओं की तादाद घटने लगती है। जितने ख़याली ख़ुदा जाहिलों और नादानों ने बना रखे हैं, उनमें से एक-एक के बारे में ग़ौर करने से इनसान को मालूम होता चला जाता है कि वे ख़ुदा नहीं हैं, हमारी ही तरह के बन्दे हैं, बल्कि हमसे भी ज़्यादा बेबस हैं। इस तरह वह उनको छोड़ता चला जाता है, यहाँ तक कि आख़िर में सिर्फ़ एक ख़ुदा रह जाता है। मगर उस एक के बारे में फिर भी उसके ख़यालात में बहुत कुछ जिहालत बाक़ी रह जाती है। कोई सोचता है कि ख़ुदा हमारी तरह जिस्म रखता है और एक जगह बैठा हुआ ख़ुदाई कर रहा है। कोई यह समझता है कि ख़ुदा बीवी-बच्चे रखता है और इनसान की तरह उसके यहाँ भी औलाद का सिलसिला चल रहा है। कोई यह गुमान करता है कि ख़ुदा इनसान की शक्ल में ज़मीन पर उतरता है। कोई कहता है कि ख़ुदा इस

;निया के कारख़ाने को चलाकर चुपचाप बैठ गया है और अब कहीं आराम ्र रहा है। कोई समझता है कि ख़ुदा के यहाँ बुज़ुर्गों और रूहों की सेफ़ारिश ले जाना ज़रूरी है और उनको ज़रिआ बनाए बग़ैर वहाँ काम नहीं ़लता। कोई अपने ख़याल में ख़ुदा की एक शक्ल तय कर लेता है और ;बादत के लिए उस शक्ल को सामने रखना ज़रूरी समझता है। इस तरह ़ी बहुत-सी ग़लतफ़हमियाँ तौहीद का अक़ीदा रखने के बावजूद इनसान के देमाग़ में बाक़ी रह जाती हैं, जिनकी वजह से वह शिर्क या कुफ़्र में घिर ़ाता है, और यह सब जिहालत और नादानी का नतीजा है।

सबसे ऊपर 'ला इला-ह इल्लल्लाह' का दर्जा है। यह वह इल्म है जो ख़ुद अल्लाह ने हर ज़माने में अपने नबियों के ज़रिए से इनसान के पास भेजा है। यही इल्म सबसे पहले इनसान हज़रत आदम (अलैहि०) को देकर ज़मीन पर भेजा गया। यही इल्म उनके बाद हज़रत नूह (अलैहि०), हज़रत इबराहीम (अलैहि०), हज़रत मूसा (अलैहि०) और तमाम दूसरे पैग़म्बरों को दिया गया था। फिर इसी इल्म को लेकर सबसे आख़िर में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) तशरीफ़ लाए। यह ख़ालिस इल्म है जिसमें जिहालत की थोड़ी-सी भी मिलावट नहीं। ऊपर हमने शिर्क और बुतपरस्ती और कुफ़्र की जितनी भी सूरतें लिखी हैं उन सबमें इनसान इसी वजह से पड़ा, क्योंकि उसने पैग़म्बरों की तालीम से मुँह मोड़कर ख़ुद अपनी समझ और अपनी अक़्ल पर भरोसा किया। तो आइए, हम बताएँ कि इस छोटे से जुमले में कितनी बड़ी हक़ीक़त बयान की गई है—

1. सबसे पहली चीज़ ख़ुदाई का तसव्वुर है। यह लम्बी-चौड़ी कायनात जिसके फैलाव को सोचकर हमारा दिमाग़ थक जाता है जो नामालूम ज़माने से चली आ रही है, जिसमें बेहिसाब मख़लूक़ पैदा हुई और पैदा होती चली आ रही है, जिसमें ऐसे-ऐसे हैरतनाक करिश्मे और चमत्कार हो रहे हैं कि उनको देखकर अक़्ल दंग रह जाती है। इस कायनात की ख़ुदाई सिर्फ़ वही कर सकता है जिसकी कोई हद न हो, हमेशा से हो और हमेशा रहे, किसी का मुहताज न हो, बेनियाज़ हो, हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखता हो, अक़्लमन्द और हिकमतवाला हो, हर चीज़ का इल्म रखता हो और कोई

चीज़ उससे छिपी हुई न हो, सबपर ग़ालिब हो, कोई उसके हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी न कर सके, बेहिसाब ताक़तों का मालिक हो, कायनात की सारी चीज़ों को उससे ज़िन्दगी और रिज़्क़ का सामान मिलता हो, हर तरह के ऐब और हर तरह की कमज़ोरी से पाक हो और उसके कामों में कोई दख़ल न दे सके।

2. ख़ुदाई की ये तमाम सिफ़तें एक ही हस्ती में इकट्ठी होनी ज़रूरी हैं। यह मुमकिन नहीं है कि दो हस्तियाँ ये सिफ़तें बराबर रखती हों, क्योंकि सबपर ग़ालिब और सबपर हाकिम तो एक ही हो सकता है। यह भी नहीं हो सकता कि ये सिफ़तें बहुत-से ख़ुदाओं में बँट जाएँ, क्योंकि अगर हाकिम एक हो और जानकारी दूसरे को हो और रोज़ी देनेवाला तीसरा हो तो हर एक ख़ुदा दूसरे का मुहताज होगा। और अगर एक ने दूसरे का साथ न दिया तो सारी कायनात एकदम ख़त्म हो जाएगी। ऐसा भी नहीं हो सकता कि इन सिफ़तों का एक से दूसरे में तबादला हो जाए, कि कभी एक ख़ुदा में पाई जाएँ और कभी दूसरे में, क्योंकि जो ख़ुदा ख़ुद ज़िन्दा रहने की ताक़त न रखता हो वह सारी कायनात को ज़िन्दगी नहीं दे सकता और जो ख़ुदा ख़ुद अपनी ख़ुदाई की हिफ़ाज़त न कर सकता हो वह इतनी बड़ी कायनात पर हुकूमत नहीं कर सकता। इस तरह आपको इल्म की जितनी ज़्यादा रौशनी मिलेगी उतना ही ज़्यादा आपको यक़ीन होता जाएगा कि ख़ुदाई की तमाम सिफ़तें सिर्फ़ एक हस्ती में होनी ज़रूरी हैं।

3. ख़ुदाई के इस पूरे और सही तसव्वुर को ध्यान में रखिए, फिर सारी कायनात पर नज़र डालिए। जितनी चीज़ें आप देखते हैं या किसी ज़रिए से महसूस करते हैं और जितनी चीज़ों तक आपके इल्म की पहुँच है, उन चीज़ों में से एक में भी ये सिफ़तें मौजूद नहीं हैं। दुनिया की तमाम चीज़ें मुहताज हैं, ग़ुलाम हैं, बनती और बिगड़ती हैं, मरती और पैदा होती हैं। कोई एक-सी हालत में नहीं रहती। किसी को अपने इख़्तियार से कुछ करने की ताक़त नहीं। किसी को 'सबसे बड़े' क़ानून से बाल बराबर हटने का इख़्तियार नहीं। उनके हालात ख़ुद गवाही देते हैं कि उनमें से कोई ख़ुदा नहीं है। किसी में ख़ुदा की थोड़ी-सी भी झलक नहीं पाई जाती। किसी का ख़ुदाई में ज़र्रा

ाबर दख़ल नहीं है। यही मतलब हैं 'ला इला-ह' के।

4. कायनात की सारी चीज़ों से ख़ुदाई छीन लेने के बाद आपको इक़रार रना पड़ता है कि एक और हस्ती है जो सबसे ऊँची है। सिर्फ़ वही तमाम ुदाई सिफ़तें रखती है और उसके सिवा कोई ख़ुदा नहीं। यही मतलब है ़ल्लल्लाह' का।

यह सबसे बड़ा इल्म है। आप जितनी तहक़ीक़ (रिसर्च) और तलाश रेंगे, आपको यही मालूम होगा कि यह इल्म की शुरुआत भी है और यही ल्म की आख़िरी हद भी। फ़िज़िक्स, केमिस्ट्री, मैथमैटिक्स, बायोलॉजी वग़ैरा ायनात की हक़ीक़तों की खोज लगानेवाले जितने इल्म हैं, उनमें से चाहे ोई इल्म ले लीजिए, उसकी रिसर्च में आप जितने बढ़ते जाएँगे, 'ला इला-ह ल्लल्लाह' की सच्चाई आपपर और ज़्यादा खुलती जाएगी और उसपर ापका यक़ीन और बढ़ता जाएगा। आपको साइंसी रिसर्च के मैदान में र-हर क़दम पर महसूस होगा कि इस सबसे बड़ी सच्चाई से इनकार करने े बाद कायनात की हर चीज़ बेमतलब हो जाती है।

नसानी ज़िन्दगी पर तौहीद के अक़ीदे का असर

अब हम आपको बताएँगे कि 'ला इला-ह इल्लल्लाह' के मान लेने से नसान की ज़िन्दगी पर क्या असर पड़ता है, और इसको न माननेवाला ुनिया और आख़िरत में क्यों नामुराद हो जाता है।

1. इस कलिमे पर ईमान रखनेवाला कभी तंग नज़र नहीं हो सकता। ह ऐसे ख़ुदा को मानता है जो ज़मीन और आसमान का बनानेवाला, पूरब ौर पश्चिम का मालिक और तमाम जहान का पालने-पोसनेवाला है। इस मान के बाद सारी कायनात में कोई चीज़ भी उसको पराई नहीं लगती। ह सबको अपनी ही तरह एक ही मालिक की मिल्कियत और एक ही ादशाह की प्रजा और रैयत समझता है। उसकी हमदर्दी और मुहब्बत और ख़िदमत किसी हद की पाबन्द नहीं रहती। उसकी नज़र वैसी ही ग़ैर-महदूद ो जाती है जैसी ख़ुद अल्लाह तआला की बादशाही ग़ैर-महदूद है। यह बात किसी ऐसे शख़्स को हासिल नहीं हो सकती जो बहुत-से छोटे-छोटे ख़ुदाओं

का क़ायल हो, या ख़ुदा में इनसान की महदूद और नाक़िस सिफ़तें मानत हो या सिरे से ख़ुदा को मानता ही न हो।

2. यह कलिमा इनसान में बहुत ऊँचे दर्जे की ख़ुद्दारी और अपनी इज़्ज़त का एहसास पैदा कर देता है । इसपर अक़ीदा रखनेवाला जानता है कि सिर्फ़ एक ख़ुदा तमाम ताक़तों का मालिक है। उसके सिवा कोई फ़ायद पहुँचानेवाला नहीं, कोई मारने और जिलानेवाला नहीं, कोई इख़्तियारवाल और असरदार नहीं। यह इल्म और यक़ीन उसको ख़ुदा के सिवा तमाम ताक़तों से बेपरवाह और निडर कर देता है। उसकी गरदन दुनिया की किसी चीज़ के आगे नहीं झुकती, उसका हाथ किसी के आगे नहीं फैलता, उसके दिल में किसी की बड़ाई का सिक्का नहीं बैठता। यह सिफ़त तौहीद के अक़ीदे के सिवा और किसी अक़ीदे से पैदा नहीं हो सकती। शिर्क, कुफ़्र और दहरियत (नास्तिकता) की लाज़िमी ख़ासियत यह है कि इनसान किसी मख़लूक़ के आगे झुके, उनको फ़ायदे और नुक़सान का मालिक समझे, उनसे डरे और उन्हीं से उम्मीदें लगाए।

3. ख़ुद्दारी के साथ यह कलिमा इनसान में ख़ाकसारी और इंकिसारी भी पैदा करता है, इसका माननेवाला कभी घमण्डी नहीं हो सकता, अपनी ताक़त और दौलत और क़ाबिलियत का घमण्ड उसके दिल में समा ही नहीं सकता, क्योंकि वह जानता है कि उसके पास जो कुछ है, ख़ुदा ही का दिया हुआ है, और ख़ुदा जिस तरह देने की ताक़त रखता है उसी तरह छीन लेने की ताक़त भी रखता है। इसके मुक़ाबले में इल्हाद[1] के अक़ीदे के साथ जब इनसान को किसी तरह का दुनियावी कमाल हासिल होता है तो वह घमण्डी हो जाता है। क्योंकि वह अपने कमाल को सिर्फ़ अपनी क़ाबिलियत का नतीजा समझता है। इसी तरह शिर्क और कुफ़्र के साथ भी ग़ुरूर पैदा होना लाज़िमी है, क्योंकि मुशरिक और काफ़िर अपने ख़याल में यह समझता है कि ख़ुदाओं और देवताओं से उसका कोई ख़ास ताल्लुक़ है जो दूसरों को नसीब नहीं।

4. इस कलिमे पर ईमान रखनेवाला अच्छी तरह समझता है कि मन की

1. ख़ुदा के वजूद को न मानना।

ाकीज़गी और नेक अमल के सिवा उसकी निजात और कामयाबी का कोई ज़रिआ नहीं, क्योंकि वह ऐसे ख़ुदा पर ईमान लाया है जो बेनियाज़ है, किसी से कोई रिश्ता नहीं रखता, बेलाग इनसाफ़ करनेवाला है और किसी को उसकी ख़ुदाई में दख़ल या असर हासिल नहीं। इसके मुक़ाबले में मुशरिक और काफ़िर लोग हमेशा झूठी उम्मीदें लगाए रहते हैं। उनमें कोई समझता है कि ख़ुदा का बेटा हमारे लिए कफ़्फ़ारा बन गया है। कुछ समझते हैं कि हम ख़ुदा के चहीते हैं और हमें सज़ा मिल ही नहीं सकती। किसी का गुमान यह है कि हम अपने बुज़ुर्गों से ख़ुदा के यहाँ सिफ़ारिश करा लेंगे। कोई अपने देवताओं पर चढ़ावा चढ़ाकर समझ लेता है कि अब उसे दुनिया में सब कुछ करने का लाइसेंस मिल गया है। इस तरह के झूठे अक़ीदे इन लोगों को हमेशा गुनाहों और बदकारियों के चक्कर में फँसाए रखते हैं और वे उनके भरोसे पर नफ़्स की पाकीज़गी और अमल की नेकी से ग़ाफ़िल हो जाते हैं। रहे दहरिये तो वे सिरे से यह अक़ीदा ही नहीं रखते कि कोई बड़ी हस्ती उनसे भले या बुरे कामों के बारे में पूछताछ करनेवाली भी है। इसलिए वे दुनिया में अपने-आपको आज़ाद समझते हैं। उनके मन की ख़ाहिश उनकी ख़ुदा होती है और वे उसके बन्दे होते हैं।

5. इस कलिमे का माननेवाला किसी हालत में मायूस नहीं होता और न उसका दिल टूटता है। वह एक ऐसे ख़ुदा पर ईमान रखता है जो ज़मीन और आसमान के सारे ख़ज़ानों का मालिक है। जिसका करम और जिसकी मेहरबानी बेहिसाब है, जिसके पास बेहद ताक़तें हैं। यह 'ईमान' उसके दिल को ग़ैर-मामूली सुकून देता है, उसको इत्मीनान और उम्मीदों से भर देता है। चाहे वह दुनिया के तमाम दरवाज़ों से ठुकरा दिया जाए, सारे सबब टूट जाएँ और तमाम ज़रिए और सहारे एक-एक करके उसका साथ छोड़ दें, फिर भी एक ख़ुदा का सहारा किसी हाल में उसका साथ नहीं छोड़ता और उसी के बलबूते पर वह नई उम्मीदों के साथ कोशिश-पर-कोशिश किए चला जाता है। दिल का यह इत्मीनान, तौहीद के अक़ीदे के सिवा किसी और अक़ीदे से हासिल नहीं हो सकता। मुशरिक, काफ़िर और दहरिये छोटे दिल के होते हैं, उनका भरोसा छोटी ताक़तों पर होता है, इसलिए मुश्किलों में बहुत जल्दी

मायूसी उनको घेर लेती है, अक्सर ऐसी हालतों में वे ख़ुदकुशी तक क गुज़रते हैं।

6. इस कलिमे पर यक़ीन इनसान में पक्के इरादे, हौसले, सब्र औ अल्लाह पर भरोसे की ज़बरदस्त ताक़त पैदा कर देता है। जब वह ख़ुदा क ख़ुश करने के लिए दुनिया में बड़े काम करने को उठता है तो उसके दि में यह यक़ीन होता है कि मेरी मदद के लिए ज़मीन और आसमान व बादशाह की ताक़त मौजूद है। यह ख़याल उसमें पहाड़ की-सी मज़बूती पैद करता है और दुनिया की सारी मुश्किलें, मुसीबतें और मुख़ालिफ़ ताक़ मिलकर भी उसको अपने इरादे से नहीं हटा सकतीं।

7. यह कलिमा इनसान को बहादुर बना देता है। देखिए, आदमी क डरपोक बनानेवाली अस्ल में दो चीज़ें होती हैं। एक तो जान, माल औ बाल-बच्चों की मुहब्बत, दूसरे ये ख़याल कि ख़ुदा के सिवा कोई औ मारनेवाला है और यह कि आदमी अपनी तदबीर से मौत को टाल सकत है। 'ला इला-ह इल्लल्लाह' का एतिक़ाद इन दोनों चीज़ों को दिल से निका देता है। पहली चीज़ तो इसलिए निकल जाती है कि इस कलिमे क माननेवाला अपनी जान और माल और हर चीज़ का मालिक ख़ुदा ही क समझता है और उसकी ख़ुशी के लिए सब कुछ क़ुरबान करने को तैयार ह जाता है। रही दूसरी चीज़ तो वह इस वजह से बाक़ी नहीं रहती कि 'ल इला-ह इल्लल्लाह' कहनेवाले के नज़दीक जान लेने की क़ुदरत कि इनसान या जानवर या तोप या तलवार या लकड़ी या पत्थर में नहीं है, इ का इख़्तियार सिर्फ़ ख़ुदा को है, और उसने मौत का जो वक़्त तय कर दि है उससे पहले दुनिया की तमाम ताक़तें भी मिलकर चाहें तो किसी की जा नहीं ले सकतीं, यही वजह है कि अल्लाह पर ईमान रखनेवाले से ज़्या बहादुर दुनिया में कोई नहीं होता। उसके सामने तलवारों की बाढ़ औ गोलियों की बौछार और फ़ौजों के हमले सब नाकाम रह जाते हैं। जब व ख़ुदा के रास्ते में लड़ने के लिए बढ़ता है तो अपने से दस गुनी ताक़त व भी मुँह फेर देता है। मुशरिक और काफ़िर और दहरिये यह क़ुव्वत कहाँ लाएँगे? उनको तो जान सबसे ज़्यादा प्यारी होती है, और वह यह समझ

हैं कि मौत दुश्मन के लाने से आती है और उनके भागने से भाग सकती है।

8. 'ला इला-ह इल्लल्लाह' का एतिक़ाद इनसान में क़नाअत[1] और बेनियाज़ी की शान पैदा कर देता है। हवस और लालच, हसद और जलन जैसे जज़्बात उसके दिल में नहीं आने देता। कामयाबी हासिल करने के नाजाइज़, ग़लत और नीच तरीक़े अपनाने का ख़याल तक उसके दिमाग़ में नहीं आने देता। वह समझता है कि रोज़ी अल्लाह के हाथ में है, जिसको चाहे ज़्यादा दे जिसको चाहे कम दे। इज़्ज़त और ताक़त और नामवरी और हुकूमत सब कुछ ख़ुदा के इख़्तियार में है, वह अपनी मस्लहत और हिकमत के लिहाज़ से जिसको जितना चाहता है, देता है। हमारा काम सिर्फ़ अपनी हद तक जाइज़ कोशिश करना है। कामयाबी और नाकामी ख़ुदा के हाथ में है। वह अगर देना चाहे तो दुनिया की कोई ताक़त उसे रोक नहीं सकती, और न देना चाहे तो कोई ताक़त दिला नहीं सकती। इसके मुक़ाबले में मुशरिक, काफ़िर और दहरिये अपनी कामयाबी और नाकामी की वजह अपनी कोशिश और दुनियावी ताक़तों की मदद या मुख़ालफ़त को समझते हैं। इसलिए उनपर हवस और लालच छाया रहता है। कामयाबी हासिल करने के लिए रिश्वत, ख़ुशामद, साज़िश और हर तरह के ओछे तरीक़े अपनाने में उन्हें कोई झिझक महसूस नहीं होती। दूसरों की कामयाबी पर हसद में जले मरते हैं और उनको नीचा दिखाने के लिए कोई बुरी-से-बुरी चाल चलने से भी नहीं चूकते।

9. सबसे बड़ी चीज़ यह है कि 'ला इला-ह इल्लल्लाह' का अक़ीदा इनसान को ख़ुदा के क़ानून का पाबन्द बनाता है। इस कलिमे पर ईमान लानेवाला यक़ीन रखता है कि ख़ुदा हर छिपी और खुली चीज़ को जानता है। हमारी शह-रग से भी ज़्यादा क़रीब है। अगर हम रात के अंधेरे में और किसी अकेली जगह में भी कोई गुनाह करें तो ख़ुदा को उसका इल्म हो जाता है। अगर हमारे दिल की गहराई में भी कोई बुरा इरादा पैदा हो तो ख़ुदा तक

---

1. थोड़े पर राज़ी होना, सन्तोष।

उसकी ख़बर पहुँच जाती है। हम सबसे छिपा सकते हैं, मगर ख़ुदा से नहीं छिपा सकते। सबसे भाग सकते हैं, लेकिन ख़ुदा की हुकूमत से नहीं निकल सकते। सबसे बच सकते हैं, मगर ख़ुदा की पकड़ से नहीं बच सकते। यह यक़ीन जितना मज़बूत होगा उतना ही ज़्यादा इनसान अपने ख़ुदा के हुक्मों को माननेवाला होगा। जिस चीज़ को ख़ुदा ने हराम किया है वह उसके पास भी न फटकेगा और जिस चीज़ का उसने हुक्म दिया है वह उसको अकेले में भी और अंधेरे में भी पूरा करेगा, क्योंकि उसके साथ एक ऐसी पुलिस लगी होती है जो किसी हाल में उसका पीछा नहीं छोड़ती और उसको ऐसी अदालत का खटका लगा रहता है जिसके वारंट से वह कहीं भाग ही नहीं सकता। यही वजह है कि मुस्लिम होने के लिए सबसे पहली और ज़रूरी शर्त 'ला इला-ह इल्लल्लाह' पर ईमान लाना है। मुस्लिम के मानी, जैसा कि आपको शुरू में बताया जा चुका है, 'ख़ुदा के फ़रमाँबरदार बन्दे' के हैं। और ख़ुदा का फ़रमाँबरदार होना मुमकिन ही नहीं जब तक कि इनसान इस बात पर यक़ीन न लाए कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' नहीं है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की तालीम में यह 'अल्लाह पर ईमान' सबसे ज़रूरी और बुनियादी चीज़ है। यह इस्लाम का मर्कज़ है, उसकी जड़ है, उसकी ताक़त का सरचश्मा है। इसके अलावा इस्लाम के जितने एतिक़ाद और एहकाम और क़ानून हैं, सब इसी बुनियाद पर क़ायम हैं और उन सबको इसी मर्कज़ से ताक़त पहुँचती है। इसको हटा देने के बाद इस्लाम कुछ नहीं रहता।

अल्लाह के फ़रिश्तों पर ईमान

अल्लाह पर ईमान के बाद दूसरी चीज़ जिसपर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने 'ईमान' लाने की हिदायत फ़रमाई है, वह फ़रिश्तों का वजूद है। इस तालीम का फ़ायदा यह है कि इससे तौहीद का अक़ीदा शिर्क के तमाम ख़तरों से पाक हो जाता है।

ऊपर आपको बताया जा चुका है कि मुशरिकों ने ख़ुदाई में दो तरह की मख़लूक़ को शरीक किया है। एक तो वे हैं जो जिस्मानी वजूद रखती हैं और

दिखाई पड़ती हैं। जैसे—सूरज, चाँद और तारे, आग और पानी और बुज़ुर्ग इनसान वग़ैरा। दूसरी वे हैं जिनका वजूद जिस्मानी नहीं है, वे दिखाई भी नहीं पड़तीं, मगर कायनात का इन्तिज़ाम कर रही हैं, जैसे—कोई हवा चलानेवाली और कोई पानी बरसानेवाली और कोई रौशनी पहुँचानेवाली। इनमें से पहली क़िस्म की चीज़ें तो इनसान की आँखों के सामने मौजूद हैं, उनकी ख़ुदाई का इनकार तो ख़ुद 'ला इला-ह इल्लल्लाह' के अल्फ़ाज़ ही से हो जाता है। लेकिन दूसरी क़िस्म की चीज़ें छिपी हुई और राज़ में है। मुशरिक लोग ज़्यादातर इन्हीं के पीछे लगे हुए हैं, इन्हीं को देवता और ख़ुदा और ख़ुदा की औलाद समझते हैं, इन्हीं की फ़र्ज़ी मूर्तियाँ बनाकर चढ़ावा चढ़ाते हैं। इसलिए तौहीद को शिर्क की इस दूसरी क़िस्म से पाक करने के लिए अलग से एक अक़ीदा बयान किया गया है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने हमें बताया कि ये नज़र न आनेवाली नूरानी हस्तियाँ, जिनको तुम देवता और ख़ुदा और ख़ुदा की औलाद कहते हो, अस्ल में ये ख़ुदा के फ़रिश्ते हैं। इनका ख़ुदाई में कोई दख़ल नहीं। ये सब ख़ुदा के ताबे-फ़रमान हैं और इतने ताबेदार हैं कि अल्लाह के हुक्म से बाल बराबर भी नहीं हट सकते। ख़ुदा उनके ज़रिए से अपना राज चलाता है और ये ठीक-ठीक उसके हुक्म को बजा लाते हैं। उनको ख़ुद अपने इख़्तियार से कुछ करने की ताक़त नहीं, ये अपनी ताक़त से ख़ुदा के सामने ख़ुद कोई तजवीज़ पेश नहीं कर सकते। इनकी इतनी मजाल भी नहीं कि उसके सामने किसी की सिफ़ारिश करें। उनकी इबादत करना और उनसे मदद माँगना तो इनसान की बेइज़्ज़ती है, क्योंकि पहले दिन ही अल्लाह तआला ने उनसे हज़रत आदम (अलैहि॰) को सजदा कराया था और उनसे ज़्यादा हज़रत आदम (अलैहि॰) को इल्म दिया था और उनको छोड़कर हज़रत आदम (अलैहि॰) को ज़मीन की ख़िलाफ़त सौंपी थी। तो जिस इनसान के सामने ये फ़रिश्ते सजदा करें उसके लिए इससे बढ़कर और क्या ज़िल्लत हो सकती है कि वह उलटा उनके आगे सजदा करे और उनसे भीख माँगे!

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने एक तरफ़ तो हमें फ़रिश्तों को पूजने और ख़ुदाई में उनको शरीक ठहराने से रोक दिया, दूसरी तरफ़ आप (सल्ल॰) ने

हमें यह बताया कि फ़रिश्ते ख़ुदा के प्यारे बन्दे हैं, गुनाहों से पाक हैं, उनकी फ़ितरत ऐसी है कि वे ख़ुदा के हुक्मों की नाफ़रमानी कर ही नहीं सकते, वे हमेशा ख़ुदा की बन्दगी और इबादत में लगे रहते हैं। उन्हीं में से एक चुने हुए फ़रिश्ते के ज़रिए से अल्लाह तआला अपने पैग़म्बरों पर 'वह्य' भेजता है, जिनका नाम जिबरील (अलैहि०) है। आप (सल्ल०) के पास हज़रत जिबरील (अलैहि०) ही के ज़रिए से क़ुरआन की आयतें नाज़िल होती थीं। इन्हीं फ़रिश्तों में वे फ़रिश्ते भी हैं जो हर वक़्त आपके साथ लगे हुए हैं, आपकी हर अच्छी-बुरी बात को देखते रहते हैं, आपकी हर अच्छी और बुरी बात को हर वक़्त सुनते और नोट करते रहते हैं। उनके पास हर शख़्स की ज़िन्दगी का रिकार्ड महफ़ूज़ रहता है। मरने के बाद जब आप ख़ुदा के सामने हाज़िर होंगे तो ये आपका आमाल-नामा पेश कर देंगे और आप देखेंगे कि उम्र-भर आपने छिपे और खुले जो भी नेकी और बदी की थी, वे सब इसमें मौजूद हैं।

फ़रिश्तों की हक़ीक़त हमें नहीं बताई गई, सिर्फ़ उनकी सिफ़ात बताई गई हैं और उनकी हस्ती पर यक़ीन रखने का हुक्म दिया गया है। हमारे पास यह मालूम करने का कोई ज़रिआ नहीं कि वे कैसे हैं और कैसे नहीं। इसलिए, अपनी अक़्ल से उनकी ज़ात के बारे में कोई बात गढ़ लेना नादानी है और उनके वजूद से इनकार करना कुफ़्र है। क्योंकि इनकार करने के लिए किसी के पास कोई दलील नहीं और इनकार का मतलब रसूलुल्लाह (सल्ल०) को नऊज़ु-बिल्लाह झूठा ठहराना है। हम उनके वजूद पर सिर्फ़ इसलिए ईमान लाते हैं कि ख़ुदा के सच्चे रसूल ने हमको उनकी ख़बर दी है।

अल्लाह की किताबों पर ईमान

तीसरी चीज़ जिसपर ईमान लाने की तालीम हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के ज़रिए से हमको दी गई है, वह अल्लाह की किताबें हैं जो उसने अपने नबियों पर नाज़िल कीं।

अल्लाह तआला ने जिस तरह मुहम्मद (सल्ल०) पर क़ुरआन नाज़िल फ़रमाया है इसी तरह आप (सल्ल०) से पहले जो रसूल गुज़रे थे, उनके पास

भी अपनी किताबें भेजी थीं। उनमें से कुछ किताबों के नाम हमें बताए गए हैं, मिसाल के तौर पर हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) के 'सहीफ़े' जो हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) पर उतरे, 'तौरात' जो हज़रत मूसा (अलैहि॰) पर नाज़िल हुई, 'ज़बूर' जो हज़रत दाऊद (अलैहि॰) के पास भेजी गई और 'इंजील' जो हज़रत ईसा (अलैहि॰) को दी गई। इनके अलावा दूसरी किताबें जो रसूलों के पास आई थीं उनके नाम हमको नहीं बताए गए, इसलिए किसी और मज़हबी किताब के बारे में हम यक़ीन के साथ न यह कह सकते हैं कि वह ख़ुदा की तरफ़ से है और न यह कह सकते हैं कि वह ख़ुदा की तरफ़ से नहीं है। हाँ, हम ईमान लाते हैं कि जो किताबें भी ख़ुदा की तरफ़ से आई थीं वे सब सच्ची थीं।

जिन किताबों के नाम हमको बताए गए हैं उनमें हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) के 'सहीफ़े' तो अब दुनिया में मौजूद नहीं हैं। रहीं तौरात, ज़बूर और इंजील तो यहूदियों और ईसाइयों के पास मौजूद तो हैं, मगर क़ुरआन मजीद में बताया गया है कि इन सब किताबों में लोगों ने ख़ुदा के कलाम को बदल डाला है और अपनी तरफ़ से बहुत-सी बातें इनके अन्दर मिला दी हैं। ख़ुद ईसाई और यहूदी भी मानते हैं कि अस्ल किताबें उनके पास नहीं हैं, सिर्फ़ उनके तर्जमे बाक़ी रह गए हैं, जिनमें सदियों से तब्दीली होती रही है और अब तक होती चली जा रही है। फिर इन किताबों के पढ़ने से भी साफ़ मालूम होता है कि इनमें बहुत-सी बातें ऐसी हैं जो ख़ुदा की तरफ़ से नहीं हो सकती हैं। इसलिए जो किताबें मौजूद हैं वे ठीक-ठीक ख़ुदा की किताबें नहीं हैं, उनमें ख़ुदा का कलाम और इनसान के कलाम मिल-जुल गए हैं और यह मालूम करने का कोई ज़रिआ नहीं है कि ख़ुदा का कलाम कौन-सा है और इनसानों का कलाम कौन-सा है। इसलिए पिछली किताबों पर ईमान का जो हुक्म हमको दिया गया है वह सिर्फ़ इस हैसियत से है कि ख़ुदा ने क़ुरआन से पहले भी दुनिया की हर क़ौम के पास अपने अहकाम अपने नबियों के ज़रिए से भेजे थे और वे सब उसी ख़ुदा के एहकाम थे जिसकी तरफ़ से क़ुरआन आया है और क़ुरआन कोई नई और अनोखी किताब नहीं है बल्कि उसी तालीम को ज़िन्दा करने के लिए भेजी गई है

जिसको पहले ज़माने के लोगों ने पाया और खो दिया या बदल डाला या इनसानी कलामों से ख़लत-मलत कर दिया।

क़ुरआन मजीद खुदा की सबसे आख़िरी किताब है। इसमें और पिछली किताबों में कई हैसियतों से फ़र्क़ है—

1. पहले जो किताबें आई थीं उनमें से अक्सर की अस्ल कापियाँ दुनिया से गुम हो गईं और उनके सिर्फ़ तर्जमे रह गए हैं। लेकिन क़ुरआन जिन अल्फ़ाज़ में उतरा था ठीक-ठीक उन्हीं अल्फ़ाज़ में मौजूद है, उसके एक हर्फ़ बल्कि एक शोशे में भी तब्दीली नहीं हुई।

2. पिछली किताबों में लोगों ने अल्लाह के कलाम के साथ अपना कलाम भी मिला दिया है। एक ही किताब में अल्लाह का कलाम भी है, क़ौम और बुज़ुर्गों के हालात भी हैं, तफ़सीर भी है, शरीअत के मसले भी हैं और ये सब चीज़ें इस तरह गडमड हैं कि खुदा के कलाम को उनमें से अलग छाँटा नहीं जा सकता। मगर क़ुरआन में अल्लाह का ख़ालिस कलाम हमें मिलता है, उसमें किसी दूसरे कलाम की थोड़ी-सी भी मिलावट नहीं है। तफ़सीर, हदीस, फ़िक़्ह, रसूल (सल्ल॰) की सीरत, सहाबा (रज़ि॰) के हालात और इस्लाम की तारीख़ पर मुसलमानों ने जो कुछ भी लिखा है, वह सब क़ुरआन से बिलकुल अलग, दूसरी किताबों में लिखा हुआ है। क़ुरआन में उनका एक लफ़्ज़ भी मिलने नहीं पाया है।

3. जितनी मज़हबी किताबें दुनिया की क़ौमों के पास हैं। उनमें से एक के बारे में भी सुबूत के साथ यह नहीं कहा जा सकता कि वह जिस नबी की तरफ़ मनसूब है, सही में उसी नबी की है, बल्कि कुछ मज़हबी किताबें ऐसी भी हैं जिनके बारे में सिरे से यह भी मालूम नहीं कि वे किस ज़माने में किस नबी पर उतरी थीं। मगर क़ुरआन के बारे में इतने ज़बरदस्त तारीख़ी सुबूत मौजूद हैं कि कोई शख़्स हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की तरफ़, उसकी निस्बत में, शक कर ही नहीं सकता। उसकी आयतों तक के बारे में यह मालूम है कि कौन-सी आयत कब और कहाँ नाज़िल हुई।

4. पिछली किताबें जिन ज़बानों में उतरी थीं वे एक मुद्दत से मुर्दा हो

चुकी हैं। अब दुनिया में उनके बोलनेवाले नहीं रहे और उनको समझनेवाले भी बहुत कम पाए जाते हैं। ऐसी किताबें अगर अस्ली और सही हालत में मौजूद भी हों तो उनके अहकाम को ठीक-ठीक समझना और उनपर चलना मुमकिन नहीं, लेकिन क़ुरआन जिस ज़बान में है वह एक ज़िन्दा ज़बान है, दुनिया में करोड़ों लोग आज भी उसको बोलते हैं और करोड़ों लोग उसे जानते और समझते भी हैं। उसकी तालीम का सिलसिला दुनिया में हर जगह जारी है। हर आदमी उसको सीख सकता है और जो उसको सीखने की फ़ुर्सत नहीं रखता उसको हर जगह ऐसे लोग मिल सकते हैं जो उसे क़ुरआन का मतलब समझाने की क़ाबिलियत रखते हैं।

5. जितनी मज़हबी किताबें दुनिया की क़ौमों के पास हैं उनमें से हर किताब में किसी ख़ास क़ौम को मुख़ातब किया गया है और हर किताब में ऐसे अहकाम पाए जाते हैं जिससे मालूम होता है कि वे सिर्फ़ एक ख़ास ज़माने के हालात और ज़रूरतों के लिए थे, मगर अब न उनकी ज़रूरत है और न उनपर अमल किया जा सकता है। इससे अपने-आप यह बात ज़ाहिर हो जाती है कि ये सब किताबें अलग-अलग क़ौमों के लिए ही ख़ास थीं। इनमें से कोई किताब भी तमाम दुनिया के लिए नहीं आई थी। फिर जिन क़ौमों के लिए ये किताबें आई थीं उनके लिए भी ये हमेशा-हमेशा के लिए न थीं। बल्कि एक ख़ास ज़माने के लिए थीं। अब क़ुरआन को देखिए, इस किताब में हर जगह इनसान को मुख़ातब किया गया है, उसके किसी एक जुमले से भी यह महसूस नहीं होता कि वह किसी ख़ास क़ौम के लिए है। इसी तरह इस किताब में जितने अहकाम दिए गए हैं, वे सब ऐसे हैं जिनपर हर ज़माने में, हर जगह अमल किया जा सकता है। इससे साबित होता है कि क़ुरआन सारी दुनिया के लिए है और हमेशा के लिए है।

6. पिछली किताबों में से हर एक में नेकी और सच्चाई की बातें बयान की गई थीं, अख़लाक़ और नेक चलनी के उसूल सिखाए गए थे, ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करने के लिए तरीक़े बताए गए थे, लेकिन कोई एक किताब भी ऐसी न थी जिसमें सारी ख़ूबियों को एक जगह इकट्ठा कर दिया गया हो और कोई चीज़ छोड़ी न गई हो। यह बात सिर्फ़ क़ुरआन

में है कि जितनी ख़ूबियाँ पिछली किताबों में अलग-अलग थीं वे सब इसमे जमा कर दी गई हैं। और जो ख़ूबियाँ पिछली किताबों में नहीं थीं वे भी इस 'किताब' में आ गई हैं।

सारी मज़हबी किताबों में इनसान की दख़ल-अन्दाज़ी से ऐसी बातें मिल गई हैं जो हक़ीक़त के ख़िलाफ़ हैं, अक्ल के ख़िलाफ़ हैं, ज़ुल्म और बेइनसाफ़ीवाली हैं, यहाँ तक कि बहुत-सी किताबों में बेहयाई और बद-अख़लाक़ी की बातें भी पाई जाती हैं। क़ुरआन इन सब चीज़ों से पाक है। उसमें कोई भी बात ऐसी नहीं है जो अक्ल के ख़िलाफ़ हो या जिसको दलील या तजरिबे से ग़लत साबित किया जा सकता हो। उसके किसी हुक्म में बेइनसाफ़ी नहीं है। उसकी कोई बात इनसान को गुमराही में डालनेवाली नहीं है। उसमे बेहयाई और बद-अख़लाक़ी का निशान तक नहीं है। शुरू से लेकर आख़िर तक सारा क़ुरआन बहुत ऊँचे दर्जे की हिकमत, सूझ-बूझ और दानाई और इनसाफ़ की तालीम और सीधे रास्ते की हिदायत और बेहतरीन अहकाम और क़ानून से भरा हुआ है।

यही ख़ूबियाँ हैं जिनकी वजह से दुनिया की तमाम क़ौमों को हिदायत की गई है कि क़ुरआन पर ईमान लाएँ और दूसरी सभी किताबों को छोड़कर सिर्फ़ इसी एक किताब की पैरवी करें, क्योंकि इनसान को ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करने के लिए जितनी हिदायतों की ज़रूरत है वे सब इसमें बिना कमी-बेशी के बयान कर दी गई हैं। इस 'किताब' के आ जाने के बाद, किसी दूसरी किताब की ज़रूरत ही बाक़ी नहीं रही।

जब आपको यह मालूम हो गया कि क़ुरआन और दूसरी किताबों मे क्या फ़र्क़ है तो यह बात आप ख़ुद समझ सकते हैं कि दूसरी किताबों पर ईमान और क़ुरआन पर ईमान में क्या फ़र्क़ होना चाहिए। पिछली किताबो पर ईमान सिर्फ़ तसदीक़ की हद तक है, यानी वे सब ख़ुदा की तरफ़ से थी और सच्ची थीं और उसी मक़सद के लिए आई थीं जिसको पूरा करने के लिए क़ुरआन आया है और क़ुरआन पर ईमान इस हैसियत से है कि यह ख़ुदा का ख़ालिस कलाम है, सरासर हक़ है, इसका हर लफ़्ज़ महफ़ूज़ है, इसकी हर बात सच्ची है, इसके हर हुक्म की पैरवी फ़र्ज़ है और ऐसी हर

त रद्द करने के क़ाबिल है जो क़ुरआन के ख़िलाफ़ हो।

ल्लाह के रसूलों पर ईमान

किताबों के बाद हमको ख़ुदा के तमाम रसूलों पर भी ईमान लाने की दायत दी गई है।

यह बात आपको पहले बताई जा चुकी है कि ख़ुदा के रसूल दुनिया की माम क़ौमों के पास आए थे और उन सबने उसी इस्लाम की तालीम दी , जिसकी तालीम देने के लिए आख़िर में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) तशरीफ़ ाए। इसलिए ख़ुदा के तमाम रसूल एक ही गरोह के लोग थे। अगर कोई ख़्स उनमें से किसी एक को भी झूठा ठहराए तो मानो उसने सबको ठलाया और किसी एक की भी तसदीक़ करे, तो आप-से-आप उसके लिए ाज़िम हो जाता है कि सबकी तसदीक़ करे। मान लीजिए कि दस आदमी क ही बात कहते हैं, तो अगर आपने एक को सच्चा तसलीम किया तो ापने अपने-आप बाक़ी नौ को भी सच्चा मान लिया। अगर आप एक को ठा कहेंगे तो इसका मतलब यह है कि आपने उस बात ही को झूठ ठहरा या है जिसे वह बयान कर रहा है और उससे दसों को झूठा ठहराना ज़रूरी जाएगा। यही वजह है कि इस्लाम में तमाम रसूलों पर ईमान लाना ज़रूरी । जो शख़्स किसी एक रसूल पर ईमान न लाएगा वह काफ़िर होगा, चाहे ह बाक़ी रसूलों को मानता हो।

हदीसों में आया है कि दुनिया में जो नबी भेजे गए हैं, उनकी तादाद क लाख चौबीस हज़ार है। अगर आप सोचें कि दुनिया कब से आबाद है ौर उसमें कितनी क़ौमें गुज़र चुकी हैं तो यह तादाद कुछ भी ज़्यादा न गेगी। इस सवा लाख नबियों में से जिनके नाम क़ुरआन में बताए गए हैं नपर तो खुले तौर पर ईमान लाना ज़रूरी है बाक़ी सबके बारे में हमको यह क़ीदा रखने की तालीम दी गई है कि जो लोग भी ख़ुदा की तरफ़ से उसके न्दों की हिदायत के लिए भेजे गए थे, वे सब सच्चे थे। हिन्दुस्तान, चीन, रान, मिस्र, अफ़्रीक़ा, यूरोप और दुनिया के दूसरे मुल्कों में जो नबी आए ोंगे, हम उन सबपर ईमान लाते हैं, मगर हम किसी ख़ास शख़्स के बारे में

यह नहीं कह सकते कि वह नबी था और न यह कह सकते हैं कि वह न न था, इसलिए कि हमें उसके बारे में कुछ नहीं बताया गया। हाँ, दूर मज़हबों के माननेवाले जिन लोगों को अपना पेशवा मानते हैं उनके ख़िला कुछ कहना हमारे लिए जाइज़ नहीं, बहुत मुमकिन है कि वे नबी हों अं बाद में उनके माननेवालों ने उनके मज़हब को बिगाड़ दिया हो, जिस त हज़रत मूसा (अलैहि॰) और हज़रत ईसा (अलैहि॰) के माननेवालों बिगाड़ा। इसलिए हम जो कुछ कहेंगे वह उनके मज़हब और उनकी रस के बारे में कहेंगे, मगर पेशवाओं के बारे में चुप रहेंगे। ताकि अनजाने हमसे किसी रसूल की शान में ग़ुस्ताख़ी न हो जाए।

पिछले रसूलों और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) में इस लिहाज़ से तो को फ़र्क़ नहीं कि आप (सल्ल॰) की तरह वे भी सच्चे थे, अल्लाह के भेजे हु थे, इस्लाम का सीधा रास्ता बतानेवाले थे और हमें सबपर ईमान लाने व हुक्म दिया गया है, मगर सारी हैसियतों में बराबर होने के बावजूद आ (सल्ल॰) में और दूसरे पैग़म्बरों में तीन बातों का फ़र्क़ भी है–

1. पिछले नबी ख़ास क़ौमों और ख़ास ज़माने के लिए आए थे औ हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) तमाम दुनिया के लिए और हमेशा के लिए नब बनाकर भेजे गए हैं, जैसा कि हम पिछले पन्नों में तफ़सील के साथ बया कर चुके हैं।

2. पिछले नबियों की तालीम या तो दुनिया से बिलकुल ख़त्म हो चुक है या अगर कुछ बाक़ी रह गई है तो अपनी ख़ालिस सूरत में महफ़ूज़ नह रही। इसी तरह उनकी ज़िन्दगी के ठीक-ठीक हालात भी आज दुनिया कहीं नहीं मिलते, बल्कि उनपर बहुत-सी कहानियों और अफ़सानों के रद्दे च गए हैं। इस वजह से अगर कोई उनकी पैरवी करना चाहे भी तो नहीं क सकता। जबकि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की तालीम, आप (सल्ल॰) की पाव सीरत, आप (सल्ल॰) की ज़बानी हिदायत, आप (सल्ल॰) के अमली तरीक़े आप (सल्ल॰) का अख़लाक़, आप (सल्ल॰) की आदतें, ग़रज़ कि हर चीज दुनिया में बिलकुल महफ़ूज़ है, इसलिए तमाम पैग़म्बरों में सिर्फ़ हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ही एक ज़िन्दा पैग़म्बर हैं और सिर्फ़ आप (सल्ल॰) ही कं

वी करना मुमकिन है।

3. पिछले नबियों के ज़रिए इस्लाम की जो तालीम दी गई थी वह कम्मल नहीं थी। हर नबी के बाद दूसरा नबी आकर उसके अहकाम और नून और हिदायत में तब्दीली और इज़ाफ़ा करता रहा और इसलाह और क़्क़ी का सिलसिला बराबर जारी रहा। इसलिए इन नबियों की तालीम को ाका ज़माना गुज़र जाने के बाद अल्लाह तआला ने महफ़ूज़ भी नहीं रखा, ोंकि हर बार उस ज़माने के लिहाज़ से पूरी तालीम आने के बाद पिछली क़िस तालीम की ज़रूरत बाक़ी नहीं रही थी। आख़िर में हज़रत मुहम्मद ल्ल॰) के ज़रिए से इस्लाम की ऐसी तालीम दी गई जो हर हैसियत से कम्मल थी। उसके बाद तमाम नबियों की शरीअतें आप-से-आप रद्द हो ;, क्योंकि मुकम्मल को छोड़कर नाक़िस की पैरवी करना अक़्ल के ख़िलाफ़ । जो शख़्स हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की पैरवी करेगा उसने अपने-आप ाम नबियों की पैरवी कर ली, इसलिए कि तमाम नबियों की तालीम में कुछ भलाई थी, वह सब आप (सल्ल॰) की तालीम में मौजूद है। जो ख़्स आप (सल्ल॰) की पैरवी छोड़कर किसी पिछले नबी की पैरवी करेगा वह त-सी भलाइयों से महरूम रह जाएगा, इसलिए कि जो भलाइयाँ बाद में ई हैं वे उस पुरानी तालीम में न थीं।

इन वजहों से तमाम दुनिया के इनसानों पर लाज़िम हो गया है कि वे र्फ़ हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की पैरवी करें।

मुसलमान होने के लिए ज़रूरी है कि इनसान हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) तीन हैसियतों से ईमान लाए।

एक यह कि आप (सल्ल॰) ख़ुदा के सच्चे पैग़म्बर हैं।

दूसरे यह कि आप (सल्ल॰) की हिदायत बिलकुल मुकम्मल है। उसमें ई कमी नहीं और हर ग़लती से पाक है।

तीसरे यह कि आप (सल्ल॰) ख़ुदा के आख़िरी पैग़म्बर हैं। आप (सल्ल॰) बाद क़ियामत तक कोई नबी किसी क़ौम में आनेवाला नहीं है, न कोई ा शख़्स आनेवाला है जिस पर ईमान लाना मुसलमान होने के लिए शर्त

हो, जिसको न मानने से कोई शख़्स काफ़िर हो जाए।

आख़िरत पर ईमान

पाँचवीं चीज़ जिस पर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने हमको ईमान लाने
हिदायत फ़रमाई है वह आख़िरत है। आख़िरत के बारे में जिन-जिन ची
पर ईमान लाना ज़रूरी है, वे ये हैं—

1. एक दिन अल्लाह तआला तमाम आलम और उसकी मख़लूक़ को मि
देगा। उस दिन का नाम 'क़ियामत' है।
2. फिर वह सबको एक दूसरी ज़िन्दगी देगा और सब अल्लाह के सा
हाज़िर होंगे इसको 'हश्र' कहते हैं।
3. तमाम लोगों ने दुनिया की अपनी ज़िन्दगी में जो कुछ किया है उस
पूरा रिकार्ड ख़ुदा की अदालत में पेश होगा।
4. अल्लाह तआला हर शख़्स के अच्छे और बुरे अमलों को तौलेग
जिसकी भलाई ख़ुदा की मीज़ान में वज़नी होगी, उसको बख़्श देगा अ
जिसकी बुराई का पल्ला भारी रहेगा उसे सज़ा देगा।
5. जिन लोगों की बख़्शिश हो जाएगी वे 'जन्नत' में जाएँगे और जिन
सज़ा दी जाएगी वे 'दोज़ख़' में जाएँगे।

आख़िरत पर ईमान की ज़रूरत

आख़िरत का यह अक़ीदा जिस तरह हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने पे
किया है उसी तरह पिछले तमाम नबी भी इसको पेश करते आए हैं, अ
हर ज़माने में इस पर ईमान लाना मुसलमान होने के लिए लाज़िमी शर्त र
है। तमाम नबियों ने उस शख़्स को काफ़िर माना है जो इससे इनकार क
या इसमें शक करे, क्योंकि इस अक़ीदे के बग़ैर ख़ुदा और उसकी किता
और उसके रसूलों को मानना बिलकुल बेमतलब हो जाता है और इनस
की सारी ज़िन्दगी ख़राब हो जाती है। अगर आप ग़ौर करें तो यह ब
आसानी से समझ में आ सकती है। आपसे जब कभी किसी काम के लि
कहा जाता है तो सबसे पहले जो सवाल आपके दिल में पैदा होता है व

यही है कि इसके करने से क्या फ़ायदा है और न करने का नुक़सान क्या है? यह सवाल क्यों पैदा होता है? इसकी वजह यह है कि इनसान की फ़ितरत हर ऐसे काम को बेकार और फ़ुज़ूल समझती है जिसका कोई हासिल न हो। आप किसी ऐसे काम को करने के लिए तैयार नहीं होंगे जिसके बारे में आपको यक़ीन हो कि उससे कोई फ़ायदा नहीं, और इसी तरह आप किसी ऐसी चीज़ से परहेज़ न करेंगे जिसके बारे में आपको यक़ीन हो कि उससे कोई नुक़सान नहीं। यही हाल शक का भी है। जिस काम के फ़ायदे में शक हो उसमें आपका दिल हरगिज़ न लगेगा और जिस काम के नुक़सानदेह होने में शक हो उससे बचने की भी आप कोई ख़ास कोशिश न करेंगे। बच्चों को देखिए, वे आग में क्यों हाथ डाल देते हैं? इसलिए कि उनको इस बात का यक़ीन नहीं है कि आग जला देनेवाली चीज़ है। और वे पढ़ने से क्यों भागते हैं? इसी वजह से कि जो कुछ फ़ायदे उनके बड़े उन्हें समझाने की कोशिश करते हैं, वे उनके दिल को नहीं लगते। अब सोचिए कि जो शख़्स आख़िरत को नहीं मानता वह ख़ुदा को मानने और उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ चलने को बेनतीजा समझता है। उसकी नज़र में न तो ख़ुदा की फ़रमाँबरदारी का कोई फ़ायदा है और न उसकी नाफ़रमानी का कोई नुक़सान। फिर यह कैसे मुमकिन है कि वह उन अहकाम की इताअत करे जो ख़ुदा ने अपने रसूलों और अपनी किताबों के ज़रिए से दिए हैं? अगर उसने ख़ुदा को मान भी लिया तो ऐसा मानना बिलकुल बेकार होगा, क्योंकि वह ख़ुदा के क़ानून की न इताअत करेगा और न ही उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ चलेगा।

लेकिन यह मामला यहीं तक नहीं रहता। आप और ग़ौर करेंगे तो आपको मालूम होगा कि आख़िरत का इनकार या इक़रार इनसान की ज़िन्दगी में फ़ैसलाकुन असर रखता है। जैसा कि हमने ऊपर बयान किया है इनसान की फ़ितरत ही ऐसी है कि वह हर काम के करने या न करने का फ़ैसला उसके फ़ायदे और नुक़सान के लिहाज़ से करता है। अब एक शख़्स तो वह है जिसकी नज़र सिर्फ़ इसी दुनिया के फ़ायदे और नुक़सान पर है। वह किसी ऐसे नेक काम पर हरगिज़ तैयार न होगा जिससे इस दुनिया में कोई फ़ायदा हासिल होने की उम्मीद न हो और किसी ऐसे बुरे काम से

परहेज़ न करेगा, जिससे इस दुनिया में कोई नुक़सान पहुँचने का ख़तरा न हो। एक दूसरा शख़्स है जिसकी नज़र अपने अमल के आख़िरी नतीजे पर है, वह दुनिया के फ़ायदे और नुक़सान को सिर्फ़ वक़्ती चीज़ समझेगा और आख़िरत के हमेशा रहनेवाले फ़ायदे या नुक़सान का लिहाज़ करके नेकी इख़्तियार करेगा और बदी को छोड़ देगा, चाहे इस दुनिया में नेकी से कितना ही बड़ा नुक़सान हो और बदी से कितना ही बड़ा फ़ायदा हो। देखिए, दोनों में कितना बड़ा फ़र्क़ हो गया। एक के नज़दीक नेकी वह है जिसका कोई अच्छा नतीजा इस दुनिया की थोड़ी-सी ज़िन्दगी में मिल जाए, जैसे कुछ रुपए मिल जाएँ, कोई ज़मीन हाथ आ जाए, कोई ओहदा मिल जाए, कुछ नेकनामी और शोहरत हो जाए, कुछ लोग वाह-वाह करें या कुछ लज़्ज़त या ख़ुशी हासिल हो जाए, कुछ ख़ाहिशें पूरी हों, नफ़्स को कुछ मज़ा आ जाए। और बुराई वह है जिससे कोई बुरा नतीजा इस ज़िन्दगी में ज़ाहिर हो या ज़ाहिर होने का डर हो, जैसे जान और माल का नुक़सान, सेहत की ख़राबी, बदनामी, हुकूमत की सज़ा, किसी तरह की तकलीफ़, रंज या बदमज़गी। इसके मुक़ाबले में दूसरे शख़्स के नज़दीक नेकी वह है जिससे ख़ुदा ख़ुश हो और बदी वह है जिससे ख़ुदा नाराज़ हो। नेकी अगर दुनिया में उसको किसी तरह का फ़ायदा न पहुँचाए बल्कि उल्टा नुक़सान-ही-नुक़सान दे तब भी वह उसको नेकी ही समझता है। यक़ीन रखता है कि आख़िरकार ख़ुदा उसको हमेशा बाक़ी रहनेवाला फ़ायदा देगा और बदी से चाहे यहाँ किसी तरह का नुक़सान न पहुँचे, न नुक़सान का डर हो, बल्कि सरासर फ़ायदा-ही-फ़ायदा नज़र आए फिर भी वह उसको बदी ही समझता है और यक़ीन रखता है कि अगर मैं दुनिया की इस थोड़ी-सी ज़िन्दगी में सज़ा से बच गया और कुछ दिन मज़े लूटता रहा, तब भी आख़िरकार ख़ुदा के अज़ाब से बच न सकूँगा।

ये दो अलग-अलग ख़यालात हैं जिनके असर से इनसान दो अलग-अलग तरीक़े अपनाता है। जो शख़्स आख़िरत पर यक़ीन नहीं रखता उसके लिए एक क़दम भी इस्लाम के तरीक़े पर चलना मुमकिन नहीं। इस्लाम कहता है कि ख़ुदा की राह में ग़रीबों को ज़कात दो। वह जवाब देता है कि ज़कात से मेरी दौलत घट जाएगी। मैं तो अपने माल पर उल्टा सूद लूँगा और सूद

डिग्री में ग़रीबों के घर का तिनका तक क़ुर्क़ करा लूँगा। इस्लाम कहता कि हमेशा सच बोलो और झूठ से बचो, चाहे सच्चाई में कितना ही नुक़सान और झूठ में कितना ही फ़ायदा हो। वह जवाब देता है कि मैं ऐसी सच्चाई को लेकर क्या करूँगा जिससे मुझे नुक़सान पहुँचे और फ़ायदा कुछ न हो और ऐसे झूठ से परहेज़ क्यों करूँ जो फ़ायदेमन्द हो और जिसमें बदनामी का कोई डर भी न हो। वह एक सुनसान रास्ते से गुज़रता है, एक क़ीमती चीज़ पड़ी हुई उसको नज़र आती है। इस्लाम कहता है कि यह तेरा माल नहीं है तू इसको हरगिज़ न ले। वह जवाब देता है कि मुफ़्त आई हुई चीज़ को क्यों छोड़ दूँ? यहाँ कोई देखनेवाला नहीं जो पुलिस को ख़बर करे या अदालत में गवाही दे या लोगों में मुझे बदनाम करे, फिर क्यों न मैं इस माल से फ़ायदा उठाऊँ? एक शख़्स चुपके से उसके पास कोई अमानत रखवाता है और मर जाता है, इस्लाम कहता है कि अमानत में ख़ियानत न कर, उसका माल उसके बच्चों को पहुँचा दे। वह कहता है क्यों? कोई गवाही इस बात की नहीं कि मरनेवाले का माल मेरे पास है। ख़ुद उसके बाल-बच्चों को इसकी ख़बर तक नहीं। जब मैं इसको आसानी के साथ खा सकता हूँ और किसी दावे या किसी बदनामी का डर भी नहीं तो क्यों न उसे खा जाऊँ? मतलब यह कि ज़िन्दगी के रास्ते में हर-हर क़दम पर इस्लाम उसको एक तरीक़े पर चलने की हिदायत करेगा और वह उसके बिलकुल ख़िलाफ़ दूसरा तरीक़ा इख़्तियार करेगा, क्योंकि इस्लाम में हर चीज़ की क़द्र और क़ीमत आख़िरत के हमेशा रहनेवाले नतीजे के लिहाज़ से है। मगर वह शख़्स हर मामले में सिर्फ़ उन नतीजों पर नज़र रखता है जो उसको दुनिया की कुछ दिन की ज़िन्दगी में हासिल होते हैं। अब आप समझ सकते हैं कि आख़िरत पर ईमान लाए बग़ैर इनसान क्यों मुसलमान नहीं हो सकता। मुसलमान तो बड़ी चीज़ है, सच यह है कि आख़िरत का इनकार इनसान को इनसानियत से गिराकर हैवानियत से भी नीचे ले जाता है।

आख़िरत के अक़ीदे की सच्चाई

आख़िरत के अक़ीदे की ज़रूरत और इसके फ़ायदे आपको मालूम हो गए। अब हम आपको यह बताते हैं कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने आख़िरत

के बारे में जो अक़ीदा बयान फ़रमाया है, अक़्ली तौर पर भी वही सही माल होता है। वैसे इस अक़ीदे पर हमारा ईमान सिर्फ़ अल्लाह के रसूल एतिमाद पर है, अक़्ल के भरोसे पर नहीं, लेकिन जब हम ग़ौर और फ़ि से काम लेते हैं तो हमको आख़िरत के बारे में तमाम अक़ीदों में सबसे ज़्या इस्लाम का अक़ीदा अक़्ल के मुताबिक़ मालूम होता है।

आख़िरत के बारे में दुनिया में तीन अलग-अलग अक़ीदे पाए जाते हैं

एक गरोह कहता है कि इनसान मरने के बाद मिट जाता है, इसके ब कोई ज़िन्दगी नहीं। यह दहरियों का ख़याल है, जो साइंसदाँ होने का दा करते हैं।

दूसरा गरोह कहता है कि इनसान अपने करतूतों का नतीजा भुगतने लिए बार-बार इसी दुनिया में जन्म लेता है। अगर उसके अमल बुरे हैं वह दूसरे जन्म में कोई जानवर जैसे कुत्ता या बिल्ली बनकर आएगा, कोई पेड़ बनकर पैदा होगा या निचले दर्जे के इनसान की शक्ल इख़्तिय करेगा। अगर अच्छे अमल हैं तो ज़्यादा ऊँचे दर्जे पर पहुँचेगा। यह ख़य सिर्फ़ कच्चे मज़हबों में पाया जाता है।

तीसरा गरोह क़ियामत और हश्र और ख़ुदा की अदालत में पेशी अ जज़ा और सज़ा पर ईमान रखता है। तमाम नबियों का अक़ीदा यही है

अब पहले गरोह के अक़ीदे पर ग़ौर कीजिए। उन लोगों का कहना कि मरने के बाद किसी को ज़िन्दा होते हमने नहीं देखा। हम तो यही देर हैं कि जो मरता है, वह मिट्टी में मिल जाता है, इसलिए मरने के बाद व ज़िन्दगी नहीं। मगर सोचिए, क्या यह कोई दलील है? मरने के बाद अ आपने किसी को ज़िन्दा होते नहीं देखा तो आप ज़्यादा-से-ज़्यादा यह व सकते हैं कि 'हम नहीं जानते कि मरने के बाद क्या होगा।' इससे अ बढ़कर आप यह दावा करते हैं कि 'हम जानते हैं कि मरने के बाद कुछ होगा।' इसका आपके पास क्या सुबूत है? एक शख़्स ने अगर हवाई जह नहीं देखा तो वह कहता है कि "मुझे मालूम नहीं कि हवाई जहाज़ क्या च है", लेकिन जब वह यह कहेगा कि "मैं जानता हूँ, हवाई जहाज़ कोई च

नहीं है," तो अक्लमन्द उसको बेवक़ूफ़ कहेंगे, इसलिए कि उसका किसी चीज़ को न देखना यह मानी नहीं रखता कि वह कोई चीज़ है ही नहीं। एक आदमी क्या अगर सारी दुनिया के लोगों ने भी किसी चीज़ को नहीं देखा हो तो यह दावा नहीं किया जा सकता कि वह नहीं है या नहीं हो सकती।

इसके बाद दूसरे अक़ीदे को लीजिए। इस अक़ीदे के मुताबिक़ एक शख़्स जो इस वक़्त इनसान है वह इसलिए इनसान हो गया कि जब वह जानवर था तो उसने अच्छे काम किए थे और एक जानवर जो इस वक़्त जानवर है वह इसलिए जानवर हो गया कि इनसान की जोन में उसने बुरे काम किए थे। दूसरे लफ़्ज़ों में यूँ कहिए कि इनसान और जानवर और पेड़ होना सब अस्ल में पहले जन्म के कामों का नतीजा है। अब सवाल यह है कि पहले क्या चीज़ थी? अगर कहते हो कि पहले इनसान था तो मानना पड़ेगा कि उससे पहले जानवर या पेड़ हो, वरना पूछा जाएगा कि इनसानी जिस्म उसको किस अच्छे काम के बदले में मिला। अगर कहते हो कि जानवर या पेड़ था, तो मानना पड़ेगा कि उससे पहले इनसान हो वरना सवाल होगा कि उसे किस बुरे काम की सज़ा में पेड़ या जानवर बनाया गया? मतलब यह है कि इस अक़ीदे को माननेवाले मख़लूक़ की शुरुआत किसी जोन (योनि) से भी क़रार नहीं दे सकते, क्योंकि हर जोन से पहले एक जोन होनी ज़रूरी है ताकि बादवाली जोन को पहली जोन के अमल का नतीजा क़रार दिया जाए, यह बात साफ़ तौर पर अक़्ल के ख़िलाफ़ है।

अब तीसरे अक़ीदे को लीजिए, इसमें सबसे पहले यह बयान किया गया है कि एक दिन क़ियामत आएगी और ख़ुदा अपने इस कारख़ाने को तोड़-फोड़कर नए सिरे से एक दूसरा ज़्यादा ऊँचे दर्जे का पायदार कारख़ाना बनाएगा। यह ऐसी बात है कि जिसके सही होने में किसी शक की गुंजाइश नहीं। दुनिया के इस कारख़ाने पर जितना ग़ौर किया जाता है, उतना ही ज़्यादा इस बात का सुबूत मिलता है कि यह कारख़ाना हमेशा रहनेवाला नहीं है, क्योंकि जितनी ताक़तें इसमें काम कर रही हैं वे सब महदूद हैं और एक दिन उनका ख़त्म हो जाना यक़ीनी है। इसलिए तमाम साइंटिस्ट इस बात को मान चुके हैं कि एक दिन सूरज ठण्डा और बेनूर हो जाएगा, सय्यारे और

सितारे एक-दूसरे से टकराएँगे और दुनिया तबाह हो जाएगी।

दूसरी बात यह बयान की गई है कि 'इनसान को दोबारा ज़िन्दगी दी जाएगी।' क्या यह मुमकिन है? अगर नामुमकिन है तो अब जो ज़िन्दगी इनसान को हासिल है यह कैसे मुमकिन हो गई? ज़ाहिर है कि जिस ख़ुदा ने इस दुनिया में इनसान को पैदा किया है वह दूसरी दुनिया में भी पैदा कर सकता है।

तीसरी बात यह है कि 'इनसान ने इस दुनिया की ज़िन्दगी में जितने अमल किए हैं उन सबका रिकार्ड महफ़ूज़ है और वह हश्र के दिन पेश होगा।' यह ऐसी चीज़ है जिसका सुबूत आज हमको इस दुनिया में भी मिल रहा है। पहले समझा जाता था कि जो आवाज़ हमारे मुँह से निकलती है वह हवा में थोड़ी-सी लहर पैदा करके फ़ना हो जाता है, मगर अब मालूम हुआ कि हर आवाज़ अपने आसपास की चीज़ों पर अपना नक़्श छोड़ जाती है जिसको दोबारा पैदा किया जा सकता है। ग्रामोफ़ोन का रिकार्ड इसी उसूल पर बना है। इसी से यह मालूम हुआ कि हमारी हर हरकत का रिकार्ड उन तमाम चीज़ों पर नक़्श हो रहा है जिसके साथ उस हरकत का किसी तरह भी टकराव होता है, जब हाल यह है तो यह बात बिलकुल यक़ीनी मालूम होती है कि हमारे कामों का पूरा खाता महफ़ूज़ है और दोबारा उसको हाज़िर किया जा सकता है।

चौथी बात यह है कि 'ख़ुदा हश्र के दिन अदालत करेगा और हक़ के साथ हमारे अच्छे-बुरे अमल की जज़ा और सज़ा देगा।' इसको कौन नामुमकिन कह सकता है? इसमें कौन-सी बात अक़्ल के ख़िलाफ़ है? अक़्ल तो ख़ुद यह चाहती है कि कभी ख़ुदा की अदालत हो और ठीक-ठीक हक़ के साथ फ़ैसले किए जाएँ। हम देखते हैं कि एक शख़्स नेकी करता है और उसका कोई फ़ायदा उसको दुनिया में हासिल नहीं होता। एक शख़्स बदी करता है और उससे कोई नुक़सान उसको नहीं पहुँचता। यही नहीं बल्कि हम हज़ारों मिसालें ऐसी देखते हैं कि एक शख़्स ने नेकी की और उसे उल्टा नुक़सान हुआ। एक दूसरे शख़्स ने बदी की और वह ख़ूब मज़े करता रहा। इस तरह की बातों को देखकर अक़्ल ख़ुद माँग करती है कि कहीं-न-कहीं

नेक आदमी को नेकी का और बुरे आदमी को उसकी शरारत का फल मिलना चाहिए।

आख़िरी चीज़ 'जन्नत और दोज़ख़' है। उनका वुजूद भी नामुमकिन नहीं। अगर सूरज, चाँद, सितारे और ज़मीन को ख़ुदा बना सकता है तो आख़िर जन्नत और दोज़ख़ को न बना सकने की क्या वजह है? जब वह अदालत करेगा और लोगों को जज़ा और सज़ा देगा तो जज़ा और इनाम पानेवालों के लिए कोई इ़ज़्ज़त, लुत्फ़ और ख़ुशी का मक़ाम, और सज़ा पानेवालों के लिए कोई ज़िल्लत, रंज और तकलीफ़ का मक़ाम भी होना चाहिए।

इन बातों पर जब आप ग़ौर करेंगे तो आपकी अक़्ल ख़ुद कह देगी कि इनसान के अंजाम के बारे में जितने अक़ीदे दुनिया में पाए जाते हैं, उनमें सबसे ज़्यादा दिल को लगता हुआ अक़ीदा यही है, और इसमें कोई चीज़ अक़्ल के ख़िलाफ़ या नामुमकिन नहीं है। फिर जब ऐसी बात हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) जैसे सच्चे नबी ने बयान की है और उसमें सरासर हमारी भलाई है, तो अक़्लमन्दी यह है कि इसपर यक़ीन किया जाए, न कि बिना किसी वजह और दलील के इसमें शक किया जाए।

कलिमा-ए-तय्यिबा

ये पाँच अक़ीदे हैं जिनपर इस्लाम की बुनियाद क़ायम है[1]। इन पाँचों अक़ीदों का ख़ुलासा सिर्फ़ एक कलिमे में आ जाता है—

'ला इला-ह इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह'

1. मैंने यहाँ ईमानियात की तादाद पाँच बताई है। यह तादाद क़ुरआन की आयत (सूरा-2 बक़रा, आयत-285; सूरा-4 निसा, आयत-136) से ली गई हैं। इसमें शक नहीं कि हदीस में तक़दीर को भी ईमानियत में शामिल किया गया है और इस तरह बुनियादी अक़ीदे पाँच के बजाय छह होते हैं, लेकिन हक़ीक़त में 'तक़दीर' पर ईमान, अल्लाह पर ईमान लाने का एक हिस्सा है और क़ुरआन मजीद में इस अक़ीदे को इसी हैसियत से बयान किया गया है। इसी लिए मैंने इस अक़ीदे को तौहीद के अक़ीदे के साथ बयान कर दिया है। बिलकुल इसी तरह कुछ हदीसों में जन्नत और दोज़ख़ और पुल-सिरात और मीज़ान को भी अलग-अलग अक़ीदे की हैसियत से बयान किया गया है, मगर हक़ीक़त में ये सब आख़िरत पर ईमान के हिस्से हैं।

(अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' नहीं, मुहम्मद सल्ल॰ अल्लाह के रसूल हैं।)

जब आप 'ला इला-ह इल्लल्लाह' कहते हैं तो तमाम झूठे माबूदों को छोड़कर सिर्फ़ एक ख़ुदा की बन्दगी का इक़रार करते हैं, और जब 'मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' कहते हैं तो इस बात की तसदीक़ करते हैं कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ख़ुदा के रसूल हैं। रिसालत की तसदीक़ के साथ यह बात ख़ुद ही आपपर लाज़िम हो जाती है कि ख़ुदा की ज़ात और सिफ़ात और फ़रिश्तों और आसमानी किताबों और नबियों और आख़िरत के बारे में जो कुछ और जैसा कुछ नबी (सल्ल॰) ने बताया है, उसपर ईमान लाएँ और ख़ुदा की इबादत और फ़रमाँबरदारी का जो तरीक़ा आप (सल्ल॰) ने बताया है उसकी पैरवी करें।

(5)
इबादतें

पिछले सफ़हात में आपको बताया गया है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) पाँच बातों पर ईमान लाने की तालीम दी—

1. अल्लाह पर, जो अकेला है और उसका कोई शरीक नहीं।
2. अल्लाह के फ़रिश्तों पर।
3. अल्लाह की किताबों पर, और ख़ासकर क़ुरआन मजीद पर (जो अल्लाह की आख़िरी किताब है)।
4. अल्लाह के रसूलों पर, और ख़ासकर उसके आख़िरी रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) पर।
5. आख़िरत की ज़िन्दगी पर।

यह इस्लाम की बुनियाद है। जब आप इन पाँच चीज़ों पर ईमान ले आए तो मुसलमानों के गरोह में शामिल हो गए, लेकिन अभी पूरे मुस्लिम नहीं हुए। इनसान पूरा मुस्लिम उस वक़्त होता है जब वह उन हुक्मों की इताअत करे जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने ख़ुदा की तरफ़ से दिए हैं, क्योंकि ईमान लाने के साथ ही इताअत आपपर लाज़िम हो जाती है और इताअत ही का नाम इस्लाम है।

देखिए, आपने इक़रार किया कि ख़ुदा ही आपका ख़ुदा है। इसके मानी ये हैं कि वह आपका मालिक है और आप उसके ग़ुलाम हैं। वह आपका हाकिम है और आप उसके फ़रमाँबरदार हैं। अब अगर उसको मालिक और हाकिम मानकर आपने नाफ़रमानी की तो आप ख़ुद अपने इक़रार के मुताबिक़ बाग़ी और मुजरिम हुए। फिर आपने इक़रार किया कि क़ुरआन मजीद अल्लाह की किताब है, इसके मानी यह हैं कि आप तसलीम करते हैं कि क़ुरआन में जो कुछ है वह ख़ुदा ही का फ़रमान है। अब आपपर लाज़िम आ गया कि उसकी हर बात को मानें और हर हुक्म पर सिर झुका दें। फिर

आपने यह भी इक़रार किया कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ख़ुदा के रसूल है
यह अस्ल में इस बात का इक़रार है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) जिस ची
का हुक्म देते हैं और जिस चीज़ से रोकते हैं वह ख़ुदा की तरफ़ से है। अ
इस इक़रार के बाद नबी (सल्ल॰) की इताअत आपपर फ़र्ज़ हो गई। इसलि
आप पूरे 'मुस्लिम' उसी वक़्त होंगे जब आपका अमल आपके ईमान व
मुताबिक़ हो, वैसे आपके ईमान और आपके अमल में जितना फ़र्क़ होग
आपके ईमान में उतनी ही कमी रहेगी।

आइए, हम अब आपको बताएँ कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने आपव
ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करने का क्या तरीक़ा सिखाया है
किन चीज़ों पर अमल करने का हुक्म दिया है और किन चीज़ों से मन
फ़रमाया है। इस सिलसिले में सबसे पहली चीज़ वे इबादतें हैं जो आपप
फ़र्ज़ की गई हैं।

इबादत का मतलब

इबादत के मानी दरअस्ल बन्दगी के हैं। आप अब्द (बन्दे, ग़ुलाम) हैं
अल्लाह आपका माबूद है। बन्दा अपने माबूद की इताअत में जो कुछ करे
इबादत है। मिसाल के तौर पर आप लोगों से बातें करते हैं, उन बातों वे
दौरान अगर आपने झूठ से, ग़ीबत से, बेहयाई की बातों से इसलिए परहेज़
किया कि ख़ुदा ने इन चीज़ों से मना किया है और हमेशा सच्चाई, इनसाफ़
नेकी और पाकीज़गी की बातें कीं, इसलिए कि ख़ुदा इनको पसन्द करता है
तो आपकी ये सब बातें इबादत होंगी, चाहे वे सब दुनिया के मामले ही व
क्यों न हों। आप लोगों से लेन-देन करते हैं, बाज़ार में ख़रीदारी और बिक्री
करते हैं, अपने घर में माँ-बाप और भाई-बहनों के साथ रहते-सहते हैं, अपने
दोस्तों ओर रिश्तेदारों से मिलते-जुलते हैं, अगर अपनी ज़िन्दगी के इन सब
मामलों में आपने अल्लाह के अहकाम को और उसके क़ानून को ध्यान में
रखा, हर एक के हक़ अदा किए, यह समझकर कि ख़ुदा ने इसका हुक्म दिया
है, और किसी का हक़ न मारा, यह समझकर कि ख़ुदा ने इससे रोका है, तो
मानो आपकी यह सारी ज़िन्दगी ख़ुदा की इबादत ही में गुज़री। आपने किसी

ग़रीब की मदद की, किसी भूखे को खाना खिलाया, किसी बीमार की ख़िदमत की और इन सब कामों में आपने अपने किसी ज़ाती फायदे या इज़्ज़त या नामवरी को नहीं बल्कि खुदा की खुशनूदी को सामने रखा तो इन सब की गिनती इबादत में होगी। आपने तिजारत, कारोबार या मज़दूरी की और उसमें खुदा का ख़ौफ़ करके पूरी सच्चाई और ईमानदारी से काम किया, हलाल की रोज़ी कमाई और हराम से बचे तो यह रोज़ी कमाना भी खुदा की इबादत में लिखा जाएगा। मतलब यह है कि दुनिया की ज़िन्दगी में हर वक़्त हर मामले में खुदा का डर और उसकी खुशी को सामने रखना, उसके क़ानून की पैरवी करना, हर ऐसे फ़ायदे को ठुकरा देना जो उसकी नाफ़रमानी से हासिल होता हो, और हर ऐसे नुक़सान को बरदाश्त कर लेना जो उसकी फ़रमाँबरदारी में पहुँचे या पहुँचने का डर हो, यह खुदा की इबादत है। इस तरीक़े की ज़िन्दगी सरासर इबादत ही इबादत है। यहाँ तक कि ऐसी ज़िन्दगी में खाना, पीना, चलना, सोना, जागना, बातचीत करना सब कुछ इबादत में दाख़िल है।

यह इबादत का अस्ली मतलब है। इस्लाम का अस्ल मक़सद मुसलमान को ऐसा ही इबादतगुज़ार बन्दा बनाना है। इस मक़सद के लिए इस्लाम में कुछ ऐसी इबादतें फ़र्ज़ की गई हैं जो इनसान को इस बड़ी इबादत के लिए तैयार करती हैं। यूँ समझ लीजिए कि ये ख़ास इबादतें उस बड़ी इबादत के लिए ट्रेनिंग-कोर्स की हैसियत रखती हैं। जो शख़्स यह ट्रेनिंग अच्छी तरह लेगा वह उस बड़ी और अस्ली इबादत को उतनी ही अच्छी तरह अदा कर सकेगा। इसी लिए इन ख़ास इबादतों को पूरी तरह फ़र्ज़ क़रार दिया गया है और उन्हें दीन के अरकान 'दीन का सुतून' कहा गया है। जिस तरह एक इमारत कुछ सुतूनों और खम्बों पर खड़ी होती है, उसी तरह इस्लामी ज़िन्दगी की इमारत भी इन सुतूनों पर खड़ी है। अगर आप इनको तोड़ेंगे तो इस्लाम की इमारत को गिरा देंगे।

नमाज़

इन फ़र्ज़ों में सबसे पहला फ़र्ज़ नमाज़ है। यह नमाज़ क्या है? दिन

में पाँच वक़्त ज़बान और अमल से उन्हीं चीज़ों का दोहराना जिनपर आप ईमान लाए हैं। आप सुबह उठे और सबसे पहले पाक साफ़ होकर अपने ख़ुदा के सामने हाज़िर हो गए। उसके सामने खड़े होकर, बैठकर, झुककर, ज़मीन पर सिर टेककर अपनी बन्दगी का इक़रार किया, उससे मदद माँगी, उससे हिदायत तलब की, उससे इताअत के इक़रार को ताज़ा किया, उसकी ख़ुशनूदी चाहने और उसके ग़ज़ब से बचने की ख़ाहिश को बार-बार दोहराया, उसकी किताब का सबक़ दोहराया, उसके रसूल (सल्ल॰) की सच्चाई पर गवाही दी और उस दिन को भी याद कर लिया जब आप उसकी अदालत में अपने किए का जवाब देने के लिए हाज़िर होंगे। इस तरह आपका दिन शुरू हुआ। कुछ घंटे आप अपने कामों में लगे रहे, फिर 'ज़ुहर' के वक़्त मुअज़्ज़िन ने आपको याद दिलाया कि आओ कुछ मिनट के लिए उस सबक़ को फिर दोहरा लो, कहीं ऐसा न हो कि उसको भूलकर तुम ख़ुदा से ग़ाफ़िल हो जाओ। आप उठे और ईमान ताज़ा करके फिर दुनिया और उसके कामों की तरफ़ पलट आए। कुछ घंटों के बाद फिर 'अस्र' के वक़्त आपको बुलाया गया और आपने फिर ईमान ताज़ा किया। इसके बाद मग़रिब हुई और रात शुरू हुई। सुबह को आपने दिन की शुरुआत जिस इबादत से की थी, रात की शुरुआत भी उसी से की ताकि रात को भी आप उस सबक़ को न भूलने पाएँ और उसे भूलकर भटक न जाएँ। कुछ घंटों के बाद 'इशा' हुई, सोने का वक़्त आ गया। अब आख़िरी बार आपको ईमान की सारी तालीम याद करा दी गई, क्योंकि यह सुकून का वक़्त है। दिन के हंगामे में अगर आपको पूरी तरह ध्यान देने का मौक़ा न मिला हो तो इस वक़्त इत्मीनान के साथ उस सबक़ को दोहरा सकते हैं।

देखिए, यह वह चीज़ है जो हर रोज़, दिन में पाँच वक़्त आपके इस्लाम की बुनियाद को मज़बूत करती रहती है। यह बार-बार आपको उस बड़ी इबादत के लिए तैयार करती है जिसका मतलब हमने अभी कुछ लाइनों पहले आपको समझा दिया है। यह उन तमाम अक़ीदों को ताज़ा करती रहती है जिनके ज़रिए आपके नफ़्स की पाकीज़गी, रूह की तरक़्क़ी, अख़लाक़ की दुरुस्तगी और अमल की इसलाह होती है। ग़ौर कीजिए, वुज़ू में आप उस

रीक़े को क्यों अपनाते हैं जो रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने बताया है, और नमाज़ वे सब चीज़ें क्यों पढ़ते हैं जो आप (सल्ल०) ने सिखाई हैं? इसी लिए तो क आप हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की इताअत को फ़र्ज़ समझते हैं। क़ुरआन ो आप जानते-बूझते ग़लत क्यों नहीं पढ़ते? इसी लिए तो कि आपको सके अल्लाह का कलाम होने का यक़ीन है। नमाज़ में जो चीज़ें पके-चुपके पढ़ी जाती हैं, अगर आप उनको न पढ़ें या उनकी जगह कुछ गैर पढ़ दें तो आपको किसका डर है? कोई इनसान तो सुननेवाला नहीं। ाहिर है कि आप यही समझते हैं कि जो कुछ हम धीरे-धीरे पढ़ रहे हैं उसे ी खुदा सुन रहा है, और हमारी किसी ढकी-छुपी हरकत से भी बेख़बर नहीं। हाँ कोई देखनेवाला नहीं होता वहाँ कौन-सी चीज़ आपको नमाज़ के लिए ठाती है? वह यही ईमान तो है कि खुदा आपको देख रहा है। नमाज़ के क़्त ज़रूरी-से-ज़रूरी काम छुड़ाकर कौन-सी चीज़ आपको नमाज़ की तरफ़ े जाती है? वह यही एहसास तो है कि नमाज़ खुदा ने फ़र्ज़ की है। जाड़े ें सुबह के वक़्त और गर्मी में दोपहर के वक़्त और रोज़ाना शाम की देलचस्प तफ़रीहों में मग़रिब के वक़्त कौन-सी चीज़ आपको नमाज़ पढ़ने पर मजबूर कर देती है? वह फ़र्ज़शनासी नहीं तो और क्या है! फिर नमाज़ पढ़ने या नमाज़ में जान-बूझकर ग़लती करने से आप क्यों डरते हैं? इसी लिए तो कि आपको खुदा का डर है और आप जानते हैं कि एक दिन उसकी अदालत में हाज़िर होना है। अब बताइए कि नमाज़ से बेहतर और कौन-सी ट्रेनिंग हो सकती है जो आपको पूरा और सच्चा मुसलमान बनानेवाली हो? मुसलमान के लिए इससे अच्छी तरबियत क्या हो सकती है कि वह हर रोज़ कई-कई बार खुदा की याद और उसके ख़ौफ़ और उसके हाज़िर होने का यक़ीन और अल्लाह की अदालत में पेश होने के ईमान को ताज़ा करती रहे और रोज़ाना कई बार लाज़िमी तौर पर रसूलुल्लाह (सल्ल०) की पैरवी करने और सुबह से लेकर रात तक कितने ही घंटों के बाद उसको फ़र्ज़ पूरा करने की मश्क़ कराई जाती रहे, ऐसे शख़्स से यह उम्मीद की जा सकती है कि जब वह नमाज़ पूरी करके दुनिया के कामों में लग जाएगा तो वहाँ भी खुदा से डरेगा और उसके क़ानून की पैरवी करेगा और हर गुनाह के मौक़े पर

उसको याद आ जाएगा कि ख़ुदा मुझे देख रहा है! अगर कोई इतनी ऊँच ट्रेनिंग के बाद भी ख़ुदा से बेख़ौफ़ हो और उसके अहकाम की ख़िलाफ़वज़ न छोड़े तो यह नमाज़ का क़ुसूर नहीं बल्कि ख़ुद उस शख़्स के नफ़्स क ख़राबी है।

फिर देखिए, अल्लाह तआला ने नमाज़ को जमाअत के साथ पढ़ने क ताकीद फ़रमाई है और ख़ासतौर पर हफ़्ते में एक बार जुमे की नमा जमाअत के साथ पढ़ना फ़र्ज़ कर दिया गया है। यह मुसलमानों में एकत और बराबरी पैदा करनेवाली चीज़ है, उनको मिलाकर एक मज़बूत जमाअ बनाती है। जब वे सब मिलकर एक ही ख़ुदा की इबादत करते हैं, एक सा उठते और बैठते हैं तो आप-से-आप उनके दिल एक-दूसरे के साथ जुड़ जा हैं और उनमें यह एहसास पैदा हो जाता है कि हम सब भाई-भाई हैं। इस चीज़ से उनके अन्दर एक सरदार की इताअत और डिसिप्लिन की ताक़त भ आती है, आपस में हमदर्दी, बराबरी और एकता पैदा होती है। अमीर औ ग़रीब, बड़े और छोटे, अफ़सर और चपरासी सब एक साथ खड़े होते हैं, न कोई ऊँची ज़ात का होता है और न नीची ज़ात का।

ये उन अनगिनत फ़ायदों में से कुछ फ़ायदे हैं जो आपकी नमाज़ स ख़ुदा को नहीं बल्कि ख़ुद आपको हासिल होते हैं। ख़ुदा ने आपके फ़ायदे के लिए इस चीज़ को आपपर फ़र्ज़ किया है। नमाज़ न पढ़ने पर उसकी नाराज़गी इसलिए नहीं है कि आपने उसका कोई नुक़सान किया, बल्कि इसलिए कि आपने ख़ुद अपने-आपको नुक़सान पहुँचाया। कैसी ज़बरदस्त ताक़त नमाज़ के ज़रिए से ख़ुदा आपको दे रहा है और आप उसको लेने से जी चुराते हैं! कितनी शर्म की बात है कि आप ज़बान से तो ख़ुदा की ख़ुदाई और रसूल (सल्ल॰) की इताअत और आख़िरत की पूछगछ का इक़रार करे और आपका अमल यह हो कि ख़ुदा और रसूल (सल्ल॰) ने सबसे बढ़कर जिस चीज़ को आपपर फ़र्ज़ किया है उसको अदा न करें! आपके इस अमल के पीछे कोई एक चीज़ ज़रूर काम कर रही है, या तो आपको नमाज़ के फ़र्ज़ होने से इनकार है या आप उसे फ़र्ज़ मानते हैं और फिर अदा करने से बचते हैं। अगर फ़र्ज़ होने से इनकार है तो आप क़ुरआन और रसूलुल्लाह (सल्ल॰)

ानों को झुठलाते हैं और इन दोनों पर ईमान लाने का झूठा दावा करते हैं। ागर आप इसे फ़र्ज़ मानकर फिर अदा नहीं करते तो आप एतिबार के ़ाबिल नहीं हैं और आपपर दुनिया के किसी मामले में भरोसा नहीं किया ा सकता। जब आप खुदा की ड्यूटी में चोरी कर सकते हैं तो कोई क्या म्मीद कर सकता है कि इनसानों की ड्यूटी में चोरी न करेंगे!

ाज़ा

दूसरा फ़र्ज़ रोज़ा है। यह रोज़ा क्या है? जिस सबक़ को नमाज़ रोज़ाना ाँच बार याद दिलाती है, उसे रोज़ा साल में एक बार पूरे एक महीने तक र वक़्त याद दिलाता रहता है। रमज़ान का महीना आया और सुबह से ाकर शाम तक आपका खाना-पीना बन्द हुआ। सहरी के वक़्त आप खा-पी हे थे कि यकायक अज़ान हुई और आपने फ़ौरन हाथ रोक लिया। अब ैसा ही मनपसन्द खाना सामने आए, कैसी ही भूख-प्यास हो, कितना ही ़ल चाहे आप शाम तक कुछ नहीं खाते। यही नहीं कि लोगों के सामने नहीं ाते, नहीं, अकेले में भी जहाँ कोई देखनेवाला नहीं होता, एक बूँद पानी ीना या एक दाना निगल जाना आपके लिए नामुमकिन होता है। फिर यह ारी पाबन्दी एक ख़ास वक़्त तक रहती है। इधर मग़रिब की अज़ान हुई ौर आप इफ़्तार (रोज़ा खोलने) के लिए लपके। अब रात-भर आप जब ौर जो चीज़ चाहें खाते हैं। सोचिए, यह क्या चीज़ है? इसकी बुनियाद ़ुदा का डर है। उसके हाज़िर-नाज़िर होने का यक़ीन है। आख़िरत की ़िन्दगी और खुदा की अदालत पर ईमान है, क़ुरआन और रसूल (सल्ल०) ी सख़्त इताअत है, फ़र्ज़ का ज़बरदस्त एहसास है, सब्र और मुसीबत के ़ुक़ाबले की मश्क़ है, खुदा की खुशी के मुक़ाबले में ख़ाहिशों को रोकने और बाने की ताक़त है। हर साल रमज़ान का महीना आता है ताकि पूरे तीस िन तक ये रोज़े आपकी ट्रेनिंग करें और आपके अन्दर वे तमाम ख़ूबियाँ दा करने की कोशिश करें ताकि आप पूरे और पक्के मुसलमान बनें, और ़ ख़ूबियाँ आपको उस इताअत के क़ाबिल बनाएँ जो एक मुसलमान को ापनी ज़िन्दगी में हर वक़्त बजा लानी चाहिए।

फिर देखिए अल्लाह तआला ने तमाम मुसलमानों के लिए रोज़े एक ह
महीने में फ़र्ज़ किए ताकि सब मिलकर रोज़े रखें, अलग-अलग न रखें। इसं
बहुत-से फ़ायदे हैं। सारी इस्लामी आबादी में पूरा एक महीना पाकीज़गी व
महीना होता है, सारे माहौल पर ईमान और अल्लाह का डर और अहका
की इताअत और अख़लाक़ की पाकीज़गी और अच्छा अमल छा जाता है
इस माहौल में बुराइयाँ दब जाती हैं और नेकियाँ उभरती हैं। अच्छे लोग ने
कामों में एक-दूसरे की मदद करते हैं। बुरे लोग बुरे काम करते हुए शरमा
हैं। अमीरों में ग़रीबों की मदद का जज़्बा पैदा होता है। ख़ुदा के रास्ते में मा
ख़र्च किया जाता है। सारे मुसलमान एक ही हालत में होते हैं इससे उन
अन्दर यह एहसास पैदा होता है कि हम सब एक जमाअत हैं। उन
भाईचारा, हमदर्दी और एकता पैदा करने के लिए यह एक कारगर नुस्ख़ा है

ये सब फ़ायदे हमारे ही लिए हैं। हमें भूखा रखने से अल्लाह का को
फ़ायदा नहीं। उसने हमारी भलाई ही के लिए रमज़ान के रोज़े हमपर फ़
किए हैं। इस फ़र्ज़ को जो लोग बग़ैर किसी मुनासिब वजह के अदा न
करते वे अपने ऊपर ख़ुद ज़ुल्म करते हैं और सबसे ज़्यादा शर्मनाक तरीक़
उनका है जो रमज़ान में खुल्लम-खुल्ला खाते-पीते हैं, वह मानो इस बात व
एलान करते हैं कि हम मुसलमानों की जमाअत से नहीं हैं, हमको इस्ला
के अहकाम की कोई परवाह नहीं है, और हम ऐसे बेबाक हैं कि जिसव
ख़ुदा मानते हैं, उसकी इताअत से भी खुल्लम-खुल्ला मुँह मोड़ जाते है
बताइए, जिन लोगों के लिए अपनी जमाअत से अलग होना एक आसा
बात हो, जिनको अपने पैदा करनेवाले और रोज़ी देनेवाले से बग़ावत कर
हुए ज़रा भी शर्म न आए और जो अपने दीन के सबसे बड़े पेशवा के मुक़
किए हुए क़ानून को खुल्लम-खुल्ला तोड़ दें तो उनसे कोई शख़्स कि
वफ़ादारी, किस नेकचलनी और अमानतदारी, किस फ़र्ज़शनासी और क़ानू
की पाबन्दी की उम्मीद कर सकता है!

ज़कात

तीसरा फ़र्ज़ ज़कात है जिसे अल्लाह तआला ने हर मुसलमान मालद
पर फ़र्ज़ किया है। अगर उसके पास कम-से-कम साढ़े बावन तोला चाँदी ।

और उसे रखे हुए पूरा एक साल बीत जाए तो वह उसका चालीसवाँ हिस्सा किसी ग़रीब रिश्तेदार या किसी मुहताज, किसी मिसकीन, किसी नव-मुस्लिम, किसी मुसाफ़िर या किसी क़र्ज़दार को दे दे।[1]

इस तरह अल्लाह ने अमीरों की दौलत में ग़रीबों के लिए कम-से-कम ढाई फ़ीसदी हिस्सा मुक़र्रर कर दिया है।[2] इससे ज़्यादा अगर कोई कुछ दे तो यह एहसान है जिसका सवाब और ज़्यादा होगा।

देखिए, यह हिस्सा अल्लाह को नहीं पहुँचता, वह आपकी किसी चीज़ का मुहताज नहीं, लेकिन वह फ़रमाता है कि तुमने अगर ख़ुशदिली के साथ मेरी ख़ातिर अपने किसी ग़रीब भाई को कुछ दिया तो समझो कि मुझको दिया, उसकी तरफ़ से मैं तुमको कई गुना ज़्यादा बदला दूँगा, मगर शर्त यह है कि उसको देकर तुम कोई एहसान न जताओ, उसको ज़लील और रुसवा न करो, उससे शुक्रिया की भी उम्मीद न लगाओ, यह भी कोशिश न करो कि तुम्हारे इस काम की लोगों में चर्चा हो और लोग तुम्हारी तारीफ़ करें कि यह साहब बड़े सख़ी और दाता हैं। अगर इन तमाम नापाक ख़यालात से अपने दिल को पाक रखोगे और सिर्फ़ मेरी ख़ुशनूदी के लिए अपनी दौलत में से ग़रीबों को हिस्सा दोगे तो मैं अपनी दौलत में से तुमको ऐसा हिस्सा दूँगा जो कभी ख़त्म न होगा।

---

1. ज़कात सिर्फ़ चाँदी में नहीं बल्कि सोने, नक़दी, तिजारती माल और जानवरों में भी है। इन सब चीज़ों में कितनी ज़कात है यह आपको फ़िक़्ह और मसले-मसाइल की किताबों से मालूम हो सकता है। यहाँ हमारा मक़्सद सिर्फ़ ज़कात की मस्लहत और उसके फ़ायदे समझाना है, इसलिए सिर्फ़ चाँदी को मिसाल के तौर पर बयान कर दिया गया है।

2. यह बात याद रखने के क़ाबिल है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने अपने ख़ानदान के लोगों यानी सय्यदों और हाशिमियों के लिए ज़कात लेना हराम कर दिया है। मतलब यह है कि सय्यदों और हाशिमियों पर ज़कात देना तो फ़र्ज़ है मगर ज़कात लेना उनके लिए जाइज़ नहीं। जो शख़्स किसी ग़रीब सय्यद या हाशिमी की मदद करना चाहता हो वह हदिया या तोहफ़ा दे सकता है, सदक़ा, ख़ैरात और ज़कात नहीं दे सकता।

अल्लाह तआला ने इस ज़कात को भी हमपर इसी तरह फ़र्ज़ किया है जिस तरह नमाज़ और रोज़े को फ़र्ज़ किया है। यह इस्लाम का बहुत बड़ा रुक्न है। इसको रुक्न इसलिए क़रार दिया गया है कि यह मुसलमानों में खुदा के लिए कुरबानी और कुशादादिली की सिफ़त पैदा करता है और खुदग़रज़ी, तंगदिली और दौलत-परस्ती जैसी बुराइयों को दूर करता है। दौलत की पूजा करनेवाला और रुपए पर जान देनेवाला, लालची और कंजूस आदमी इस्लाम के किसी काम का नहीं। जो शख़्स खुदा के हुक्म पर अपनी गाढ़ी मेहनत से कमाया हुआ माल अपनी किसी ज़ाती ग़रज़ के बग़ैर क़ुरबान कर सकता हो वही इस्लाम के सीधे रास्ते पर चल सकता है। ज़कात मुसलमान को इस कुरबानी की मश्क़ कराती है और उसको इस क़ाबिल बनाती है कि खुदा के रास्ते में जब माल ख़र्च करने की ज़रूरत हो तो वह अपनी दौलत को सीने से चिमटाए न बैठा रहे बल्कि दिल खोलकर ख़र्च करे।

ज़कात का दुनियावी फ़ायदा यह है कि मुसलमान आपस में एक-दूसरे क़ी मदद करें। कोई मुसलमान नंगा-भूखा और परेशानहाल न हो। जो अमीर हैं वे ग़रीबों को सम्भाल लें और जो ग़रीब हैं वे भीख माँगते न फिरें। कोई शख़्स अपनी दौलत को सिर्फ़ अपने ऐशो-आराम और अपनी शानो-शौक़त ही पर न उड़ा दे, बल्कि यह भी याद रखे कि उसकी दौलत में उसकी क़ौम के यतीमों और बेवाओं और मुहताजों का भी हक़ है। उसमें उन लोगों का भी हक़ है जो काम करने की क़ाबिलियत रखते हैं मगर पैसा न होने की वजह से मजबूर हैं। उसमें उन बच्चों का भी हक़ है जो ज़हीन तो हैं मगर ग़रीब होने की वजह से तालीम नहीं पा सकते। उसमें उनका भी हक़ है जो अपाहिज हो गए हैं और कोई काम करने के क़ाबिल नहीं रहे। जो शख़्स इस हक़ को नहीं मानता वह ज़ालिम है। इससे बढ़कर और क्या ज़ुल्म होगा कि आप अपने पास रुपए के खत्ते-के-खत्ते भरे बैठे रहें, कोठियों में ऐश करें, मोटरों में घूमें और क़ौम के हज़ारों आदमी मुहताज हों और हज़ारों काम के आदमी बेकार मारे-मारे फिरें। इस्लाम ऐसी खुदग़रज़ी का दुश्मन है। काफ़िरों को उनकी तहज़ीब यह सिखाती है कि जो कुछ दौलत उनके हाथ लगे उसको समेट-समेटकर रखें और उसे सूद पर चलाकर आसपास के लोगों की

कमाई भी अपने पास खींच लें। लेकिन मुसलमानों को उनका मज़हब यह सिखाता है कि अगर ख़ुदा आपको इतनी रोज़ी दे जो आपकी ज़रूरत से ज़्यादा हो तो उसको समेटकर न रखिए, बल्कि अपने दूसरे भाइयों को दीजिए ताकि उनकी ज़रूरतें पूरी हों और आपकी तरह वे भी कुछ कमाने और काम करने के क़ाबिल हो जाएँ।

हज

चौथा फ़र्ज़ हज है। यह उम्र में सिर्फ़ एक बार अदा करना ज़रूरी है और वह भी सिर्फ़ उन लोगों के लिए जो मक्का शरीफ़ तक जाने का ख़र्च उठा सकते हों।

जहाँ अब मक्का शरीफ़ आबाद है वहाँ अब से हज़ारों साल पहले हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) ने अल्लाह की इबादत के लिए एक छोटा-सा घर बनाया था। अल्लाह ने उनके ख़ुलूस और मुहब्बत की यह क़द्र फ़रमाई कि उसको अपना घर क़रार दिया और फ़रमाया कि जिसको हमारी इबादत करनी हो वह इसी घर की तरफ़ रुख़ करके इबादत करे और फ़रमाया कि हर मुसलमान चाहे वह दुनिया के किसी कोने में हो, अगर ताक़त रखता हो तो उम्र में कम-से-कम एक बार इस घर की ज़ियारत के लिए आए और इसी मुहब्बत के साथ हमारे इस घर का तवाफ़ करे जिसके साथ हमारा प्यारा बन्दा इबराहीम (अलैहि॰) तवाफ़ करता था। फिर यह भी हुक्म दिया कि जब हमारे घर की तरफ़ आओ तो अपने दिलों को पाक करो, नफ़्सानी ख़ाहिशों को रोको, ख़ून-ख़राबा, बदकारी और बदज़बानी से बचो। उसी अदब, एहतिराम और ख़ाकसारी के साथ आओ जिसके साथ तुमको अपने मालिक के दरबार में हाज़िर होना चाहिए। यह समझो कि हम उस बादशाह की ख़िदमत में जा रहे हैं जो ज़मीन और आसमान का हाकिम है और जिसके मुक़ाबले में सब इनसान फ़क़ीर हैं। इस ख़ाकसारी के साथ जब आओगे और ख़ुलूसे-दिल के साथ हमारी इबादत करोगे तो हम तुम्हें अपनी नवाज़िशों से मालामाल कर देंगे।

एक पहलू से देखिए तो हज सबसे बड़ी इबादत है। ख़ुदा की मुहब्बत

अगर इनसान के दिल में न हो तो वह अपने कारोबार को छोड़कर अपने रिश्तेदारों और दोस्तों से जुदा होकर इतने लम्बे सफ़र की तकलीफ़ ही क्यों उठाएगा। इसलिए हज का इरादा ख़ुद ही मुहब्बत और ख़ुलूस की दलील है। फिर जब इनसान इस सफ़र के लिए निकलता है तो उसकी हालत आम सफ़र जैसी नहीं होती। इस सफ़र में ज़्यादातर उसका ध्यान ख़ुदा की तरफ़ लगा रहता है। उसके दिल में शौक़ और वलवला बढ़ता चला जाता है। जैसे-जैसे काबा क़रीब आता जाता है, मुहब्बत की आग और ज़्यादा भड़कती है, गुनाहों और नाफ़रमानियों से दिल अपने-आप नफ़रत करता है, पिछले गुनाहों पर शर्मिन्दगी होती है, आगे के लिए ख़ुदा से दुआ करता है कि फ़रमाँबरदारी की तौफ़ीक़ दे। इबादत और अल्लाह के ज़िक्र में मज़ा आने लगता है, सजदे लम्बे-लम्बे होने लगते हैं और देर तक सिर उठाने को दिल नहीं चाहता। क़ुरआन पढ़ता है तो उसमें कुछ मज़ा ही और आता है, रोज़ा रखता है तो उसकी मिठास ही कुछ और होती है। फिर जब वह हिजाज़ की ज़मीन पर क़दम रखता है तो इस्लाम की शुरू की पूरी तारीख़ उसकी आँखों के सामने फिर जाती है, जगह-जगह ख़ुदा से मुहब्बत करनेवालों और उसके नाम पर जान निछावर करनेवालों के आसार दिखाई देते हैं। वहाँ की रेत का एक-एक ज़र्रा इस्लाम की बड़ाई पर गवाही देता है और वहाँ की हर कंकरी पुकारती है कि यही है वह सरज़मीन जहाँ से ख़ुदा का कलिमा बुलन्द हुआ इस तरह मुसलमान का दिल ख़ुदा के इश्क़ और इस्लाम की मुहब्बत से भर जाता है और वहाँ से वह ऐसा गहरा असर लेकर आता है जो मरते दम तक दिल से ख़त्म नहीं होता।

दीन के साथ अल्लाह ने हज में दुनिया के भी बहुत-से फ़ायदे रखे हैं हज की वजह से मक्का दुनिया के मुसलमानों का मर्कज़ बना दिया गया है ज़मीन के हर कोने से अल्लाह का नाम लेनेवाले एक ही वक़्त में वहाँ जमा हो जाते हैं। एक-दूसरे से मिलते हैं। आपस में इस्लामी मुहब्बत क़ायम होती है और यह बात दिलों में बैठ जाती है कि मुसलमान चाहे किसी मुल्क और किसी नस्ल के हों सब एक-दूसरे के भाई हैं और एक क़ौम हैं। इस तरह हज एक तरफ़ ख़ुदा की इबादत है तो उसके साथ ही वह दुनिया के तमाम

ुसलमानों की कान्फ्रेंस भी है और मुसलमानों की आलमी बिरादरी में इत्तिहाद और एकता पैदा करने का सबसे बड़ा ज़रिआ भी।

इस्लाम की हिमायत

आख़िरी चीज़ जो खुदा की तरफ़ से आपपर फ़र्ज़ की गई है वह इस्लाम की हिमायत' है। वैसे यह इस्लाम के अरकान में से नहीं है, मगर यह इस्लामी फ़र्ज़ों में से एक अहम फ़र्ज़ है। क़ुरआन और हदीस में इसपर बहुत ज़ोर दिया गया है।

इस्लाम की हिमायत क्या चीज़ है और क्यों फ़र्ज़ की गई है? इसको आप एक मिसाल से आसानी के साथ समझ सकते हैं। मान लीजिए कि एक शख़्स आपसे दोस्ती करता है, मगर हर आज़माइश के मौक़े पर यह साबित होता है कि उसको आपसे कोई हमदर्दी नहीं। वह आपके फ़ायदे और नुक़सान की कोई परवाह नहीं करता। जिस काम में आपका नुक़सान होता हो उसको वह अपने ज़ाती फ़ायदे के लिए बेझिझक कर गुज़रता है। जिस काम में आपका फ़ायदा होता है उसमें वह आपका साथ देने से सिर्फ़ इसलिए बचता है कि उसमें खुद उसका कोई फ़ायदा नहीं। आपपर कोई मुसीबत आए तो वह आपकी कोई मदद नहीं करता। कहीं आपकी बुराई की जा रही हो तो वह खुद भी बुराई करनेवालों में शरीक हो जाता है, या कम-से-कम आपकी बुराई को चुपचाप सुनता रहता है। आपके दुश्मन आपके ख़िलाफ़ कोई काम करें तो वह उनके साथ शरीक हो जाता है या कम-से-कम आपको उनकी शरारतों से बचाने की कोशिश नहीं करता। बताइए, क्या ऐसे शख़्स को आप अपना दोस्त समझेंगे? आप ज़रूर कहेंगे हरगिज़ नहीं, इसलिए कि वह सिर्फ़ ज़बान से दोस्ती का दावा करता है, मगर हक़ीक़त में दोस्ती उसके दिल में नहीं है। दोस्ती का मतलब तो यह है कि इनसान जिसका दोस्त हो उससे मुहब्बत और ख़ुलूस रखे, उसका हमदर्द और भला चाहनेवाला हो, वक़्त पर उसके काम आए, दुश्मनों के मुक़ाबले में उसकी मदद करे, उसकी बुराई सुनने तक को तैयार न हो। जब यह बात उसमें नहीं हो तो वह मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) है, उसका दोस्ती का दावा झूठा है।

इसी मिसाल से आप समझ लीजिए कि जब आप मुसलमान होने व दावा करते हैं तो आपपर क्या चीज़ फ़र्ज़ होती है। मुसलमान होने का मतल यह है कि आपमें इस्लामी और ईमानी ग़ैरत हो, इस्लाम की मुहब्बत अं अपने मुसलमान भाइयों की सच्ची ख़ैरख़ाही हो। आप चाहे दुनिया का कं काम करें उसमें इस्लाम का मफ़ाद और मुसलमानों की भलाई हमेशा आप सामने रहे। अपने ज़ाती फ़ायदे के लिए या अपने किसी ज़ाती नुक़सान बचने के लिए आप कभी कोई ऐसा काम न कर बैठें जो इस्लाम के मक़र और मुसलमानों की फ़लाह के ख़िलाफ़ हो। हर उस काम में दिल, जान अं माल से हिस्सा लीजिए जो इस्लाम और मुसलमानों के लिए फ़ायदेमन्द और हर उस काम से अलग रहिए जो इस्लाम और मुसलमानों के लि नुक़सानदेह हो। अपने दीन और अपनी दीनी जमाअत की इज़्ज़त को अप इज़्ज़त समझिए। जिस तरह आप अपनी बेइज़्ज़ती बरदाश्त नहीं कर सव उसी तरह इस्लाम और इस्लाम के माननेवालों की तौहीन भी बरदाश्त कीजिए। जिस तरह आप ख़ुद अपने ख़िलाफ़ अपने दुश्मनों का साथ न देते उसी तरह इस्लाम और मुसलमानों के दुश्मनों का भी साथ मत दीजि जिस तरह आप अपनी जान, माल और इज़्ज़त की हिफ़ाज़त के लिए तरह की क़ुरबानी देने को तैयार हो जाते हैं उसी तरह इस्लाम अ मुसलमानों की हिफ़ाज़त के लिए हर क़ुरबानी देने को तैयार रहिए। सिफ़ात हर उस शख़्स में होनी चाहिएँ जो अपने-आपको मुसलमान कह है, वरना उसका शुमार मुनाफ़िक़ों में होगा और उसका अमल ख़ुद ही उस ज़बानी दावे को झूठा साबित कर देगा।

इस्लाम की इस हिमायत की एक शाख़ वह है जिसे शरीअत 'जिहाद' कहते हैं। जिहाद के लफ़्ज़ी मानी हैं 'किसी काम में अपनी ताक़त लगा देना।' इस मानी के लिहाज़ से जो शख़्स ख़ुदा का कलि बुलन्द करने के लिए माल से, ज़बान से, क़लम से, हाथ-पाँव से कोशि करता है, वह भी जिहाद ही करता है। मगर ख़ासतौर पर 'जिहाद' का ल उस जंग के लिए इस्तेमाल किया गया है जो तमाम दुनियावी ग़रज़ से प होकर सिर्फ़ ख़ुदा के लिए इस्लाम के दुश्मनों से की जाए। शरीअत में

ाद को 'फ़र्ज़े किफ़ाया' कहते हैं। यानी यह ऐसा फ़र्ज़ है जो तमाम
लमानों पर आयद तो होता है लेकिन अगर एक जमाअत इसको अदा कर
तो बाक़ी लोगों पर से इसको अदा कर देने की ज़िम्मेदारी ख़त्म हो जाती
। हाँ, अगर किसी इस्लामी मुल्क पर दुश्मनों का हमला हो तो इस सूरत
उस मुल्क के तमाम लोगों पर, नमाज़ और रोज़े की तरह, जिहाद पूरी तरह
र्ज़ हो जाता है। अगर वे मुक़ाबले की ताक़त न रखते हों तो उनके क़रीब
मुस्लिम मुल्क हों वहाँ के भी हर मुसलमान पर फ़र्ज़ हो जाता है कि जान
र माल से उनकी मदद करें। अगर उनकी मदद से भी दुश्मन का हमला
का न जा सके तो तमाम दुनिया के मुसलमानों पर उनकी मदद करना उसी
ह फ़र्ज़ हो जाता है जिस तरह नमाज़-रोज़ा फ़र्ज़ है, यानी, अगर एक
ख़्स भी यह फ़र्ज़ अदा करने में कमी करेगा तो गुनहगार होगा। ऐसी
लतों में जिहाद की अहमियत नमाज़ और रोज़े से भी ज़्यादा हो जाती है,
लिए कि वह वक़्त ईमान के इम्तिहान का होता है। जो शख़्स मुसीबत
वक़्त इस्लाम और मुसलमानों का साथ न दे उसके ईमान ही में शक है,
र उसकी नमाज़ और उसके रोज़े किस काम के? और अगर कोई
दक़िस्मत ऐसा हो कि उस वक़्त इस्लाम और मुसलमानों के दुश्मनों का
थ दे तो वह मुनाफ़िक़ है, उसकी नमाज़ और उसका रोज़ा और उसकी
कात और उसका हज सब कुछ बेकार है।

(6)
दीन और शरीअत

अब तक हमने आपको जो बातें बताई हैं वे सब दीन की बातें थीं। अब हम हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) की 'शरीअत' के बारे में कुछ बयान करेंगे, मगर सबसे पहले आपको यह समझ लेना चाहिए कि शरीअत किसे कहते हैं और शरीअत और दीन में फ़र्क़ क्या है?

दीन और शरीअत का फ़र्क़

आपको अब तक बताया जा चुका है कि सारे नबी दीने-इस्लाम ही की तालीम देते चले आए हैं और दीने-इस्लाम यह है कि आप ख़ुदा की ज़ात और सिफ़ात और आख़िरत की जज़ा और सज़ा पर उसी तरह ईमान लाएँ जिस तरह ख़ुदा के सच्चे पैग़म्बर ने तालीम दी है। ख़ुदा की किताबों को मानिए और तमाम मन-माने तरीक़े छोड़कर उसी तरीक़े को हक़ समझिए जो इन किताबों में बताया गया है। ख़ुदा के पैग़म्बरों की इताअत कीजिए और सबको छोड़कर उन्हीं की पैरवी कीजिए। ख़ुदा की इबादत में ख़ुदा के सिवा किसी को शरीक न कीजिए। इसी ईमान और इबादत का नाम दीन है और यह चीज़ तमाम नबियों की तालीम रही है।

इसके बाद एक चीज़ दूसरी भी है जिसको 'शरीअत' कहते हैं, यानी इबादत के तरीक़े, समाजी उसूल, आपसी मामलों और ताल्लुक़ात के क़ानून, हराम और हलाल, जाइज़ और नाजाइज़ की हदें, वग़ैरा। इन चीज़ों के बारे में अल्लाह तआला ने शुरू में अलग-अलग ज़मानों और अलग-अलग क़ौमों के हालात का लिहाज़ करके अपने पैग़म्बरों के पास मुख़्तलिफ़ शरीअतें भेजी थीं ताकि वह हर क़ौम को अलग-अलग तहज़ीब और अख़लाक़ की तालीम और तरबियत देकर एक बड़े क़ानून की पैरवी के लिए तैयार करते रहें। जब यह काम पूरा हो गया तो अल्लाह ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) को वह बड़ा क़ानून देकर भेज दिया जिसके तमाम उसूल पूरी दुनिया के लिए हैं। अब

दीन तो वही है जो पिछले नबियों ने सिखाया था, मगर पुरानी शरीअतें मनसूख़ (रद्द) कर दी गई हैं और उनकी जगह ऐसी शरीअत क़ायम की गई है जिसमें तमाम इनसानों के लिए इबादत के तरीक़े और समाजी उसूल और आपसी मामलों के क़ानून और हराम-हलाल की हदें एक जैसी हैं।

शरीअत के हुक्म मालूम करने के ज़रिए

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की शरीअत के उसूल और अहकाम मालूम करने के लिए हमारे पास दो ज़रिए हैं, एक क़ुरआन मजीद, दूसरे हदीस। क़ुरआन मजीद के बारे में तो आप जानते हैं कि वह अल्लाह का कलाम है और उसका हर लफ़्ज़ अल्लाह की तरफ़ से है। रही हदीस तो इससे मुराद वे बातें हैं जो रसूलुल्लाह (सल्ल॰) से हम तक पहुँची हैं। रसूलुल्लाह (सल्ल॰) की सारी ज़िन्दगी क़ुरआन की तशरीह थी। नबी होने के बाद से 23 साल की मुद्दत तक आप (सल्ल॰) हर वक़्त तालीम और हिदायत में लगे रहे और अपनी ज़बान और अपने अमल से लोगों को बताते रहे कि अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी बसर करने का तरीक़ा क्या है। इस ज़बरदस्त ज़िन्दगी में सहाबी मर्द और औरतें और ख़ुद हुज़ूर (सल्ल॰) के रिश्तेदार और आप (सल्ल॰) की बीवियाँ, सब आप (सल्ल॰) की हर बात ग़ौर से सुनते थे, हर काम पर निगाह रखते थे और हर मामले में जो उन्हें पेश आता था आप (सल्ल॰) से शरीअत का हुक्म पूछते थे। कभी आप (सल्ल॰) फ़रमाते कि यह काम करो और यह न करो, जो लोग मौजूद होते वे इस फ़रमान को याद कर लेते थे। इसी तरह कभी आप (सल्ल॰) कोई काम किसी ख़ास तरीक़े पर किया करते थे, देखनेवाले उसको भी याद रखते थे और न देखनेवालों से बयान कर देते थे कि आप (सल्ल॰) ने फ़ुलाँ काम फ़ुलाँ तरीक़े पर किया था। इसी तरह कभी कोई शख़्स आप (सल्ल॰) के सामने कोई काम करता तो आप (सल्ल॰) या तो उसपर ख़ामोश रहते या पसन्द फ़रमाते या मना कर देते थे, इन सब बातों को भी लोग महफ़ूज़ रखते थे। ऐसी जितनी बातें सहाबी मर्दों और सहाबिया औरतों से लोगों ने सुनीं, उनको कुछ लोगों ने ज़बानी याद कर लिया और कुछ ने लिख लिया और यह भी याद कर लिया कि यह ख़बर हमको किससे पहुँची है। फिर इन सब रिवायतों को धीरे-धीरे किताबों

में जमा कर लिया गया। इस तरह भारी तादाद में हदीसें इकट्ठी हो गईं, जिसमें ख़ासतौर पर इमाम मालिक (रह॰), इमाम बुख़ारी (रह॰), इमाम मुस्लिम (रह॰), इमाम तिरमिज़ी (रह॰), इमाम अबू-दाऊद (रह॰), इमाम नसई (रह॰) और इमाम इब्ने-माजा (रह॰) की किताबें बहुत मुस्तनद समझी जाती हैं।

फ़िक्ह

क़ुरआन और हदीस के अहकाम पर ग़ौर करके कुछ बुज़ुर्गों ने आम लोगों की आसानी के लिए तफ़सील के साथ क़ानून बना दिए हैं जिनको 'फ़िक्ह' कहा जाता है। चूँकि हर शख़्स क़ुरआन की तमाम बारीकियों को नहीं समझ सकता, न हर शख़्स के पास हदीस का इतना इल्म है कि वह खुद शरीअत के अहकाम मालूम कर सके, इसलिए जिन बुज़ुर्गों ने बरसों की मेहनत और सोच-विचार और खोजबीन के बाद 'फ़िक्ह' को तैयार किया उनके एहसान से दुनिया के मुसलमान कभी बरी नहीं हो सकते। यह उन्हीं की मेहनतों का नतीजा है कि आज करोड़ों मुसलमान आसानी के साथ शरीअत की पैरवी कर रहे हैं और किसी को खुदा और रसूल (सल्ल॰) के अहकाम मालूम करने में दिक़्क़त नहीं होती।

शुरू में बहुत-से बुज़ुर्गों ने फ़िक्ह को अपने-अपने ढंग से तैयार किया था, मगर धीरे-धीरे चार फ़िक्हें दुनिया में बाक़ी रह गईं और आज दुनिया के मुसलमान ज़्यादातर इन्हीं की पैरवी करते हैं—

1. इमाम अबू-हनीफ़ा (रह॰) की फ़िक्ह—इसकी तरतीब में इमाम अबू-यूसुफ़ (रह॰), इमाम मुहम्मद (रह॰), इमाम ज़ुफ़र (रह॰), ऐसे ही कुछ और बड़े आलिमों का मशवरा भी शामिल था। इसे 'फ़िक्हे-हनफ़ी' कहा जाता है।
2. इमाम मालिक (रह॰) की फ़िक्ह—यह 'फ़िक्हे-मालिकी' के नाम से मशहूर है।
3. इमाम शाफ़िई (रह॰) की फ़िक्ह—यह 'फ़िक्हे-शाफ़िई' कहलाती है।
4. इमाम अहमद-बिन-हम्बल (रह॰) की फ़िक्ह—इसको 'फ़िक्हे-हम्बली'

कहते हैं।

ये चारों फ़िक्ह रसूलुल्लाह (सल्ल॰) के बाद दो सौ साल के अन्दर तैयार ' गई थीं। इन फ़िक्हों में जो इख़्तिलाफ़ (फ़र्क़) पाए जाते हैं वे बिलकुल दरती (Natural) हैं। कुछ लोग जब किसी मामले की तहक़ीक़ करते हैं या ऽसी बात को समझने की कोशिश करते हैं तो उनकी तहक़ीक़ और समझ थोड़ा बहुत इख़्तिलाफ़ ज़रूर होता है, लेकिन चूँकि ये सब सच्चे और नेक ायत और मुसलमानों की भलाई चाहनेवाले बुज़ुर्ग थे इसलिए सारे सलमान इन चारों फ़िक्हों को सही मानते हैं।

हाँ, यह ज़ाहिर है कि एक मामले में एक ही तरीक़े की पैरवी की जा कती है, चार अलग-अलग तरीक़ों की नहीं। इसलिए ज़्यादातर आलिम यह हते हैं कि मुसलमानों को इन चारों में से किसी एक की पैरवी करनी ाहिए।

इनके अलावा आलिमों का एक गरोह ऐसा भी है जो यह कहता है कि ऽसी ख़ास फ़िक्ह की पैरवी करने की ज़रूरत नहीं है। इल्म रखनेवाले ादमी को सीधे क़ुरआन और हदीस से अहकाम मालूम करने चाहिएँ और े लोग इल्म न रखते हों उन्हें चाहिए कि जिस आलिम पर भी उनका त्मीनान हो उसकी पैरवी करें। ये लोग 'अहूले-हदीस' कहलाते हैं। ऊपर के ारों गरोहों की तरह ये भी हक़ पर हैं।

ासव्वुफ़

फ़िक्ह का ताल्लुक़ इनसान के ज़ाहिरी अमल से है। वह सिर्फ़ यह खती है कि आपको जैसा और जिस तरह हुक्म दिया गया उसको आपने ऽया या नहीं किया। अगर किया तो फ़िक्ह को इससे मतलब नहीं कि ापके दिल का क्या हाल था। दिल की हालत से जो चीज़ बहस करती है सका नाम 'तसव्वुफ़' है।[1] मिसाल के तौर पर आप नमाज़ पढ़ते हैं, इस

. क़ुरआन में इस चीज़ का नाम 'तज़किया' और 'हिक्मत' है, हदीस में इसे 'एहसान' का नाम दिया गया है। बाद के लोगों में यही चीज़ 'तसव्वुफ़' के नाम से मशहूर हुई।

इबादत में फ़िक्ह सिर्फ़ यह देखती है कि आपने वुज़ू ठीक किया है, क़िबले के रुख़ खड़े हुए हैं, नमाज़ के तमाम अरकान अदा किए हैं, जो चीज़ें नमाज़ में पढ़ी जाती हैं वे सब पढ़ ली हैं, और जिस वक़्त जितनी रकअतें मुक़र्रर की गई हैं ठीक उसी वक़्त उतनी ही रकअतें पढ़ी हैं। जब ये सब आपने कर दिया तो फ़िक्ह की नज़र में आपकी नमाज़ पूरी हो गई। लेकिन तसव्वुफ़ यह देखता है कि इस इबादत में आपके दिल का क्या हाल रहा। आपने ख़ुदा की तरफ़ तवज्जोह की या नहीं? आपका दिल दुनिया के ख़यालों से पाक हुआ या नहीं? आपके अन्दर नमाज़ से ख़ुदा का ख़ौफ़ और उसके हाज़िर-नाज़िर होने का यक़ीन और सिर्फ़ उसी की ख़ुशनूदी चाहने का जज़्बा भी पैदा हुआ या नहीं? इस नमाज़ ने आपकी रूह को कितना पाक किया? आपके अख़लाक़ कहाँ तक सुधरे? आपको किस हद तक सच्चा, पक्का और अमल करनेवाला मुसलमान बना दिया?

ये तमाम बातें जो नमाज़ के अस्ल मक़सद से ताल्लुक़ रखती हैं, जितनी ज़्यादा हासिल होंगी, तसव्वुफ़ की नज़र में आपकी नमाज़ उतनी ही कामिल होगी और इनमें जितनी कमी रह जाएगी उसी लिहाज़ से वह आपकी नमाज़ को नाक़िस मानेगा। इसी तरह शरीअत के जितने अहकाम हैं उन सबमें फ़िक्ह सिर्फ़ यह देखती है कि आपको जो हुक्म जिस तरह से दिया गया था, आपने उसी तरह किया या नहीं, और तसव्वुफ़ यह देखता है कि उस हुक्म पर अमल करने में आपके अन्दर ख़ुलूस और नेक नीयती और सच्ची इताअत कितनी थी।

फ़िक्ह और तसव्वुफ़ के इस फ़र्क़ को आप एक मिसाल से अच्छी तरह समझ सकते हैं। जब कोई शख़्स आपसे मिलता है तो आप उसपर दो तरह से नज़र डालते हैं। एक तो आप यह देखते हैं कि वह सही और तन्दुरुस्त है या नहीं, अंधा, लंगड़ा, लूला तो नहीं है, ख़ूबसूरत है या बदसूरत, अच्छे कपड़े पहने हुए है या मैला-कुचैला है। दूसरी चीज़ आप यह देखते हैं कि उसके अख़लाक़ कैसे हैं, उसकी आदतें कैसी हैं, उसकी अक़्ल और समझ-बूझ कैसी है, वह आलिम है या जाहिल, नेक है या बद। इनमें पहली नज़र समझिए कि फ़िक्ह की है और दूसरी तसव्वुफ़ की है। दोस्ती के लिए

जब आप किसी शख़्स को पसन्द करना चाहेंगे तो उसकी शख़्सियत के दोनों पहलुओं को देखेंगे। आप चाहेंगे कि उसका ज़ाहिर भी अच्छा हो और बातिन (अन्दर का हाल) भी अच्छा हो। इसी तरह इस्लाम में भी वही ज़िन्दगी पसन्द की गई है जिसमें शरीअत के अहकाम की ज़ाहिरी और बातिनी पाबन्दी दोनों सही हों। जिस शख़्स की ज़ाहिरी इताअत ठीक है, मगर बातिन में इताअत की रूह नहीं है, उसके अमल की मिसाल ऐसी है जैसे कोई आदमी ख़ूबसूरत हो मगर मुर्दा हो। जिस शख़्स के अमल में सभी बातिनी ख़ूबियाँ मौजूद हों, मगर ज़ाहिरी इताअत ठीक न हो, उसकी मिसाल ऐसी है जैसे कोई शख़्स बहुत शरीफ़ और नेक हो मगर बदसूरत और अपाहिज हो।

इस मिसाल से आपको फ़िक़्ह और तसव्वुफ़ का आपसी ताल्लुक़ मालूम हो गया होगा। मगर अफ़सोस है कि बाद के ज़मानों में इल्म और अख़लाक़ की गिरावट से जहाँ और बहुत-सी ख़राबियाँ पैदा हुईं, तसव्वुफ़ के पाक चश्मे को भी गन्दा कर दिया गया। लोगों ने तरह-तरह के ग़ैर-इस्लामी तरीक़े गुमराह क़ौमों से सीखे और उनको तसव्वुफ़ के नाम से इस्लाम में दाख़िल कर दिया। अजीब-अजीब तरह के अक़ीदों और तरीक़ों पर तसव्वुफ़ का नाम चस्पाँ किया, जिनकी कोई गुंजाइश क़ुरआन और हदीस में नहीं है। फिर इस क़िस्म के लोगों ने धीरे-धीरे अपने-आपको शरीअत की पाबन्दी से भी आज़ाद कर लिया। वे कहते हैं कि तसव्वुफ़ को शरीअत से कोई वास्ता नहीं, यह रास्ता ही दूसरा है। सूफ़ी को क़ानून और क़ायदे की पाबन्दी से क्या मतलब। इस तरह की बातें ज़्यादातर जाहिल सूफ़ी कहते हैं, जो बिलकुल ग़लत है। इस्लाम में किसी ऐसे तसव्वुफ़ की गुंजाइश नहीं है जो शरीअत के अहकाम से जुड़ा हुआ न हो। किसी सूफ़ी को यह हक़ नहीं कि वह नमाज़ और रोज़े और हज और ज़कात की पाबन्दी से आज़ाद हो जाए। कोई सूफ़ी उस क़ानून के ख़िलाफ़ अमल करने का हक़ नहीं रखता जो समाजी मामलात, लेन-देन और रोज़ी कमाने, अख़लाक़, मामलात, हुक़ूक़ और हलाल-हराम के बारे में ख़ुदा और रसूल (सल्ल॰) ने बताए हैं। कोई ऐसा शख़्स जो रसूलुल्लाह (सल्ल॰) की सही पैरवी न करता हो और आप (सल्ल॰) के मुक़र्रर किए हुए तरीक़े का पाबन्द न हो, मुसलमान सूफ़ी कहलाए जाने

(7)
शरीअत के अहकाम

अब आख़िर में हम शरीअत के उसूल और ख़ास-ख़ास अहकाम बयान करेंगे, जिनसे आपको मालूम होगा कि इस्लामी शरीअत इनसान की ज़िन्दगी को किस तरह एक बेहतरीन ज़ाब्ते का पाबन्द बनाती है और इस ज़ाब्ते में कैसी-कैसी हिकमतें रखी गई हैं।

शरीअत के उसूल

आप अपनी हालत पर ग़ौर करेंगे तो आपको मालूम होगा कि दुनिया में आप बहुत-सी ताक़तें लेकर आए हैं और हर ताक़त चाहती है कि उससे काम लिया जाए। आप में अक़्ल है, इरादा है, ख़ाहिश है, देखने, सुनने और चखने की ताक़त है, हाथ-पाँव की ताक़त है, नफ़रत और ग़ुस्सा है, शौक़ और मुहब्बत है, डर और लालच है। इनमें से कोई चीज़ भी बेकार नहीं। हर चीज़ आपको इसलिए दी गई है कि आपको उसकी ज़रूरत है। दुनिया में आपकी ज़िन्दगी और ज़िन्दगी की कामयाबी इसी में है कि आपकी तबीअत और फ़ितरत जो कुछ माँगती है उसको पूरा कीजिए और यह उसी वक़्त हो सकता है जबकि आप उन तमाम ताक़तों से काम लें जो ख़ुदा ने आपको दी हैं।

आप देखेंगे कि जितनी क़ुव्वतें आपको दी गई हैं, उनसे काम लेने के ज़रिए भी आपको दिए गए हैं। सबसे पहले तो ख़ुद आपका जिस्म है जिसमें सभी ज़रूरी चीज़ें मौजूद हैं। इसके बाद आपके आसपास की दुनिया है, जिसमें हर तरह के अनगिनत ज़रिए फैले हुए हैं। आपकी मदद के लिए ख़ुद आपकी तरह के इनसान मौजूद हैं। आपकी ख़िदमत के लिए जानवर, पेड़-पौधे, पत्थर-पहाड़, ज़मीन, पानी, हवा, गर्मी, रौशनी और ऐसी ही अनगिनत चीज़ें हैं। ख़ुदा ने इन सबको इसी लिए पैदा किया है कि आप इनसे काम लें और ज़िन्दगी बसर करने में उनसे मदद हासिल करें।

अब एक दूसरे पहलू से देखिए। आपको जो क़ुव्वतें दी गई हैं वे फ़ायदे के लिए दी गई हैं, नुक़सान के लिए नहीं दी गईं। उनके इस्तेमाल की सही सूरत वही हो सकती है जिससे सिर्फ़ फ़ायदा हो, नुक़सान या तो बिलकुल न हो या अगर हो भी तो कम-से-कम। इसके सिवा जितनी सूरतें हैं, अक़्ल कहती है कि वे सब ग़लत होनी चाहिएँ। मिसाल के तौर पर अगर आप कोई ऐसा काम करें जिससे ख़ुद आपको नुक़सान पहुँचे तो यह भी ग़लती होगी। अगर आप अपनी ताक़त से ऐसा काम लें जिससे दूसरे इनसानों को नुक़सान पहुँचे तो यह भी ग़लती होगी। अगर आप अपनी क़ुव्वत को इस तरह इस्तेमाल करें कि जो चीज़ें आपको दी गई हैं, वे बेकार ही ख़त्म हो जाएँ तो यह भी ग़लती होगी। आपकी अक़्ल ख़ुद इस बात की गवाही दे सकती है कि नुक़सान चाहे किसी तरह का हो बचने के लायक़ चीज़ है। उसको गवारा किया जा सकता है तो सिर्फ़ उसी सूरत में जबकि उससे बचना या तो मुमकिन ही न हो या उसके मुक़ाबले में कोई बहुत बड़ा फ़ायदा हो।

इसके बाद और आगे बढ़िए। दुनिया में दो तरह के इनसान पाए जाते हैं। एक तो वे जो जान-बूझकर अपनी कुछ ताक़तों को इस तरह इस्तेमाल करते हैं जिनसे या तो ख़ुद उन्हीं की दूसरी ताक़तों को नुक़सान पहुँच जाता है या दूसरे इनसानों को पहुँचता है या उनके हाथों वे चीज़ें बरबाद हो जाती हैं जो सिर्फ़ फ़ायदा उठाने के लिए उनको दी गई हैं, न कि बरबाद करने के लिए। दूसरे वे लोग हैं जो जान-बूझकर तो ऐसा नहीं करते मगर जानकारी न होने की वजह से ऐसी ग़लतियाँ उनसे हो जातीं हैं। पहली क़िस्म के लोग शरारती हैं और उनके लिए ऐसे क़ानून और ज़ाब्ते की ज़रूरत है जो उनको क़ाबू में रखे और दूसरी क़िस्म के लोग जानकारी नहीं रखते, इसलिए उनके लिए ऐसे इल्म की ज़रूरत है, जिससे उन्हें अपनी क़ुव्वतों के इस्तेमाल का सही ढंग मालूम हो जाए।

ख़ुदा ने जो शरीअत अपने पैग़म्बर के पास भेजी है वह इसी ज़रूरत को पूरा करती है। वह आपकी किसी क़ुव्वत को बरबाद करना नहीं चाहती, न किसी ख़ाहिश और जज़्बे को मिटाना चाहती है, वह आपसे नहीं कहती कि आप दुनिया छोड़ दें, जंगलों और पहाड़ों में चले जाएँ, भूखे मरें और नंगे

फेरें, मन मारकर अपने-आपको तकलीफ़ में डालें और दुनिया का आराम अपने ऊपर हराम कर लें। बिलकुल नहीं, यह ख़ुदा की बनाई हुई शरीअत है और ख़ुदा वही है जिसने यह दुनिया इनसान के लिए बनाई है। वह अपने इस कारख़ाने को मिटाना और बेरौनक़ करना कैसे पसन्द करेगा! उसने इनसान के अन्दर कोई क़ुव्वत बेकार नहीं रखी है, न ज़मीन और आसमान में कोई चीज़ इसलिए पैदा की है कि उससे कोई काम न लिया जाए। वह तो ख़ुद यह चाहता है कि दुनिया का यह कारख़ाना पूरी चमक-दमक के साथ चले। हर ताक़त से इनसान पूरा-पूरा काम ले। दुनिया की हर चीज़ से फ़ायदा उठाए और उन तमाम चीज़ों को इस्तेमाल करे जो ज़मीन और आसमान में मौजूद हैं, मगर इस तरह कि जिहालत या शरारत से न ख़ुद अपना नुक़सान करे न दूसरों को नुक़सान पहुँचाए। ख़ुदा ने शरीअत के तमाम उसूल इसी लिए बनाए हैं। जितनी चीज़ें इनसान के लिए नुक़सानदेह हैं उन सबको शरीअत में हराम (नाजाइज़) कर दिया गया है और जो चीज़ें फ़ायदेमन्द हैं उन्हें हलाल और जाइज़ क़रार दिया गया है। जिन कामों से इनसान ख़ुद अपना या दूसरों का नुक़सान करता है, उनपर शरीअत रोक लगाती है और ऐसे तमाम कामों की इजाज़त देती है जो उसके लिए फ़ायदेमन्द हों और किसी के लिए नुक़सान पहुँचानेवाले न हों। उसके सारे क़ानून इस उसूल के मुताबिक़ हैं कि इनसान को दुनिया में सभी ख़ाहिशें और ज़रूरतें पूरी करने और अपने फ़ायदे के लिए हर तरह की कोशिश करने का हक़ है। मगर इस हक़ से उसको इस तरह फ़ायदा उठाना चाहिए कि जिहालत और शरारत से वह दूसरों के हक़ न मारे, बल्कि जहाँ तक हो सके दूसरों के लिए मददगार हो। जिन कामों में एक पहलू फ़ायदे का और दूसरा पहलू नुक़सान का हो उनमें शरीअत का उसूल यह है कि बड़े फ़ायदे के लिए छोटे नुक़सान को क़बूल कर लिया जाए और बड़े नुक़सान से बचने के लिए छोटे फ़ायदे को छोड़ दिया जाए।

हर शख़्स हर ज़माने में हर चीज़ और हर काम के बारे में यह नहीं जानता कि उसमें क्या फ़ायदा है और क्या नुक़सान है, इसलिए ख़ुदा ने, जिसके इल्म से कायनात का कोई राज़ छिपा हुआ नहीं है, इनसान की पूरी

ज़िन्दगी के लिए,एक सही ज़ाब्ता बना दिया है। इस ज़ाब्ते की बहुत-
मस्लहतें अब से सदियों पहले लोगों की समझ में नहीं आती थीं, मगर अ
इल्म की तरक़्क़ी ने उनपर से परदा उठा दिया है। बहुत-सी मस्लहतों को अ
भी लोग नहीं समझते, मगर जितना इल्म तरक़्क़ी करेगा वह ज़ाहिर हो
चली जाएँगी। जो लोग अपने नाक़िस इल्म और अपनी नाक़िस समझ
भरोसा करते हैं वे सदियों से ग़लतियाँ करने और ठोकरें खाने के ब
आख़िरकार इसी शरीअत के किसी-न-किसी क़ायदे को अपनाने पर मज
हुए हैं। मगर जिन लोगों ने ख़ुदा के रसूल (सल्ल॰) पर भरोसा किया है व
जिहालत और जानकारी न होने के नुक़सान से बचे हुए हैं, क्योंकि उनक
चाहे मस्लहतों का इल्म हो या न हो वे हर हाल में सिर्फ़ अल्लाह के रसू
(सल्ल॰) के एतिमाद पर एक ऐसे क़ानून की पाबन्दी करते हैं जो ख़ालि
और सही इल्म के मुताबिक़ बनाया गया है।

हक़ की चार क़िस्में

शरीअत के मुताबिक़ हर इनसान पर चार तरह के हक़ होते हैं। ए
अल्लाह का हक़, दूसरे ख़ुद उसके नफ़्स और जिस्म का हक़, तीसरे लो
का हक़, चौथे उन चीज़ों का हक़ जिनको ख़ुदा ने उसके इख़्तियार में दि
है, ताकि वह उनसे काम ले और फ़ायदा उठाए। इन्हीं चार हुक़ूक़
समझना और ठीक-ठीक अदा करना एक सच्चे मुसलमान का फ़र्ज़ है
शरीअत इन सब हक़ों को अलग-अलग बयान करती है और उनको अ
करने के लिए ऐसे तरीक़े मुक़र्रर करती है कि एक साथ सबके हक़ अदा
और जहाँ तक हो सके कोई हक़ मारा न जाए।

अल्लाह का हक़

अल्लाह का सबसे पहला हक़ यह है कि इनसान सिर्फ़ उसी को ख़ु
माने और उसके साथ किसी को शरीक न करे। यह हक़ 'ला इला
इल्लल्लाह' (अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं) पर ईमान लाने से अदा हो
है जैसा कि हम पहले आपको बता चुके हैं।

अल्लाह का दूसरा हक़ यह है कि जो हिदायत उसकी तरफ़ से अ

उसको सच्चे दिल से तसलीम किया जाए। यह हक़ 'मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' (हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ अल्लाह के रसूल हैं) पर ईमान लाने से अदा होता है। इसकी तफ़सील भी हमने आपको पहले बता दी है।

अल्लाह का तीसरा हक़ यह है कि उसकी फ़रमाँबरदारी की जाए। यह हक़ उस क़ानून की पैरवी से अदा होगा जो ख़ुदा की किताब और रसूल (सल्ल॰) की सुन्नत में बयान हुआ है। इसकी तरफ़ भी हम इशारा कर चुके हैं।

अल्लाह का चौथा हक़ यह है कि उसकी इबादत की जाए। इसी हक़ को अदा करने के लिए इनसान पर वे फ़र्ज़ लागू किए गए हैं जिनको पिछले पन्नों में बयान किया गया है।

अल्लाह का हक़ दूसरे सभी हक़ों से ऊँचा है, इसलिए इसको अदा करने में दूसरे हक़ों की क़ुरबानी किसी-न-किसी हद तक ज़रूरी है। मिसाल के तौर पर नमाज़, रोज़ा वग़ैरा फ़र्ज़ को अदा करने में इनसान ख़ुद अपने नफ़्स और जिस्म के बहुत-से हक़ क़ुरबान करता है। नमाज़ के लिए इनसान सवेरे उठता है और ठंडे पानी से वुज़ू करता है, दिन-रात में कई बार अपने ज़रूरी काम और अपनी मनचाही तफ़रीहों को छोड़ता है। रमज़ान में महीने-भर भूख-प्यास और ख़ाहिशों को रोकने की तकलीफ़ उठाता है। ज़कात अदा करने में अपने माल की मुहब्बत को ख़ुदा की मुहब्बत पर क़ुरबान करता है। हज में सफ़र की तकलीफ़ और माल की क़ुरबानी गवारा करता है। जिहाद में ख़ुद अपनी जान और माल क़ुरबान कर देता है। इसी तरह दूसरे लोगों के हक़ भी ख़ुदा के हक़ पर थोड़े-बहुत क़ुरबान हो जाते हैं। मिसाल के तौर पर नमाज़ में एक नौकर अपने मालिक का काम छोड़कर अपने 'बड़े मालिक' की इबादत के लिए जाता है। हज में एक शख़्स अपने कारोबार को छोड़कर मक्का शरीफ़ का सफ़र करता है, जिसका असर बहुत-से लोगों के हक़ों पर पड़ता है। जिहाद में इनसान सिर्फ़ अल्लाह के लिए जान लेता है और जान देता है, इसी तरह बहुत-सी वे चीज़ें भी अल्लाह के हक़ पर फ़िदा हो जाती हैं जो इनसान के इख़्तियार में हैं, जैसे जानवर, माल वग़ैरा।

लेकिन अल्लाह तआला ने अपने हक़ के लिए ऐसी हदें तय कर दी हैं कि उसके हक़ को अदा करने में दूसरे हक़ों की जितनी क़ुरबानी ज़रूरी है, उससे ज़्यादा न की जाए। मिसाल के तौर पर नमाज़ को लीजिए। अल्लाह ने जो नमाज़ें आपपर फ़र्ज़ कर दी हैं उनको अदा करने में हर तरह की सुहूलत रखी गई है। वुज़ू के लिए पानी न मिले या बीमार हों तो तयम्मुम कर लीजिए, सफ़र में हों तो नमाज़ को क़स्र कर दीजिए। बीमार हों तो बैठकर या लेटकर पढ़ लीजिए। फिर नमाज़ में जो कुछ पढ़ा जाता है, वह भी इतना ज़्यादा नहीं है कि एक वक़्त की नमाज़ में कुछ मिनट से ज़्यादा लगे। सुकून के वक़्त इनसान चाहे तो पूरी सूरा बक़रा पढ़ ले, मगर कारोबार के वक़्त में लम्बी नमाज़ पढ़ने से रोक दिया गया है। फिर फ़र्ज़ नमाज़ों से बढ़कर अगर कोई शख़्स नफ़्ल नमाज़ें पढ़ना चाहे तो ख़ुदा उससे ख़ुश होता है, मगर ख़ुदा यह नहीं चाहता कि आप रातों की नींद और दिन का चैन त्याग दें, या रोज़ी कमाने के वक़्त को नमाज़ें पढ़ने में लगा दें, या ख़ुदा के बन्दों के हक़ मारकर नमाज़ें पढ़ते चले जाएँ।

इसी तरह रोज़े में भी हर तरह की आसानी रखी गई है। साल-भर में सिर्फ़ एक महीने के रोज़े फ़र्ज़ किए गए हैं, वे भी सफ़र या बीमारी की हालत में छोड़े जा सकते हैं और बाद में रखे जा सकते हैं। अगर रोज़ेदार बीमार पड़ जाए और जान को ख़तरा हो तो रोज़ा तोड़ सकता है। रोज़े के लिए जितना वक़्त मुक़र्रर किया गया है उसमें एक मिनट बढ़ाना भी ठीक नहीं। सहरी के आख़िरी वक़्त तक खाने की इजाज़त है, और इफ़्तार का वक़्त आते ही फ़ौरन रोज़ा खोल लेने का हुक्म है। फ़र्ज़ रोज़ों के अलावा अगर कोई शख़्स नफ़्ल रोज़े रखे तो यह और भी ख़ुदा की ख़ुशनूदी का सबब होगा, मगर ख़ुदा इसको पसन्द नहीं करता कि आप लगातार रोज़े रखते चले जाएँ और अपने-आपको इतना कमज़ोर कर लें कि दुनिया का काम-काज न कर सकें।

ज़कात के लिए भी ख़ुदा ने कम-से-कम मिक़दार मुक़र्रर की है और वह भी उन लोगों पर फ़र्ज़ है जिनके पास निसाब के बराबर माल हो। इससे ज़्यादा अगर कोई शख़्स ख़ुदा के रास्ते में सदक़ा या ख़ैरात करे तो ख़ुदा

ससे ख़ुश होगा, मगर ख़ुदा यह नहीं चाहता कि आप अपने या अपने रवालों के हक़ को क़ुरबान करके सब कुछ सदक़े या ख़ैरात में दे डालें और ाद कंगाल होकर बैठ रहें। इसमें भी बीच का रास्ता अपनाने का हुक्म दिया या है।

फिर हज को देखिए। पहले तो यह फ़र्ज़ ही उन लोगों पर किया गया जो हज का ख़र्च उठा सकते हों और सफ़र की तकलीफ़ें बरदाश्त करने क़ाबिल हों। फिर इसमें यह आसानी भी रखी गई है कि उम्र-भर में एक ार जब सुहूलत हो, जा सकते हैं। अगर रास्ते में लड़ाई हो रही हो या दअमनी हो, जिससे जान का ख़तरा हो तो हज का इरादा टाल सकते हैं। सके साथ ही माँ-बाप की इजाज़त भी ज़रूरी है, ताकि बूढ़े माँ-बाप को ापके न रहने पर तकलीफ़ न हो। इन सब बातों से मालूम होता है कि ल्लाह तआला ने अपने हक़ में दूसरों के हक़ का कितना ख़याल रखा है।

अल्लाह के हक़ पर इनसानी हक़ की सबसे बड़ी क़ुरबानी जिहाद में की ाती है, क्योंकि उसमें इनसान अपनी जान और माल भी ख़ुदा की राह में छावर करता है और दूसरों की जान और माल को भी क़ुरबान कर देता , मगर जैसा कि हमने ऊपर आपको बताया है, इस्लाम का उसूल यह है क बड़े नुक़सान से बचने के लिए छोटे नुक़सान को गवारा करना चाहिए। स उसूल को सामने रखिए और फिर देखिए कि चन्द सौ या चन्द हज़ार ा चन्द लाख आदमियों के ख़त्म हो जाने के मुक़ाबले में बहुत बड़ा नुक़सान ह है कि हक़ के मुक़ाबले में बातिल (असत्य) को तरक़्क़ी मिल जाए, ख़ुदा ा दीन कुफ़्र, शिर्क और दहरियत के मुक़ाबले में दबकर रहे और दुनिया में मराही और बदअख़लाक़ी फैले। इसलिए इस बड़े नुक़सान से बचने के लिए ल्लाह तआला ने मुसलमानों को हुक्म दिया है कि जान और माल की छोटी रबानी को हमारी ख़ुशनूदी के लिए गवारा कर लो, मगर इसके साथ यह ी कह दिया है कि जान-माल की यह क़ुरबानी कम-से-कम हो। जंग में बूढ़ों, च्चों, औरतों, घायलों और बीमारों पर हाथ न उठाओ। सिर्फ़ उन लोगों से ड़ो जो बातिल की तरफ़दारी में तलवार उठाते हैं। दुश्मन के मुल्क में ज़रूरत तबाही और बरबादी न फैलाओ, दुश्मनों पर फ़तह पाओ तो उनके

साथ इनसाफ़ करो। किसी बात पर उनसे समझौता हो जाए तो उसकी पाबन्दी करो। जब वे हक़ की दुश्मनी से रुक जाएँ तो लड़ाई बन्द कर दो। ये सब बातें ज़ाहिर करती हैं कि खुदा का हक़ अदा करने के लिए इनसानी हक़ की जितनी क़ुरबानी ज़रूरी है उससे ज़्यादा क़ुरबानी को जाइज़ नहीं रखा गया है।

नफ़्स का हक़

अब दूसरी क़िस्म के हक़ को लीजिए, यानी इनसान पर खुद उसके अपने नफ़्स और जिस्म का हक़।

शायद आपको यह सुनकर हैरत होगी कि इनसान सबसे बढ़कर खुद अपने ऊपर ज़ुल्म करता है। यह है भी हैरत की बात क्योंकि देखने में तो हर शख़्स यह महसूस करता है कि उसको सबसे ज़्यादा अपने-आपसे मुहब्बत है, और शायद कोई शख़्स भी इस बात का इक़रार न करेगा कि वह आप ही अपना दुश्मन है, लेकिन आप सोचेंगे तो इसकी हक़ीक़त आपको मालूम हो जाएगी।

इनसान की एक बड़ी कमज़ोरी यह है कि उसपर जब कोई ख़ाहिश छा जाती है तो वह उसका ग़ुलाम बन जाता है और उसके लिए जान-बूझकर या अनजाने में अपना बहुत-कुछ नुक़सान कर लेता है। आप देखते हैं कि एक शख़्स को नशे की चाट लग गई है तो वह उसके पीछे दीवाना हो रहा है और सेहत का नुक़सान, माल का नुक़सान, इज़्ज़त का नुक़सान, ग़रज़ हर चीज़ का नुक़सान गवारा किए जाता है। एक दूसरा शख़्स खाने की लज़्ज़त का ऐसा रसिया है कि हर तरह की अला-बला खा जाता है और अपनी जान को नुक़सान पहुँचाता है। एक तीसरा शख़्स शहवानी (काम-वासना सम्बन्धी) ख़ाहिशों का बन्दा बन गया है और ऐसी हरकतें कर रहा है जिनका लाज़िमी नतीजा उसकी तबाही है। एक चौथे शख़्स को रूहानी तरक़्क़ी की धुन समाती है तो वह अपनी जान के पीछे हाथ धोकर पड़ गया है। अपने नफ़्स की तमाम ख़ाहिशों को दबा रहा है। अपने जिस्म की ज़रूरतों को पूरा करने से इनकार कर रहा है। शादी से बचता है, खाने-पीने से परहेज़ करता

कपड़े पहनने से इनकार करता है, यहाँ तक कि साँस लेने को भी तैयार नहीं, जंगलों और पहाड़ों में जा बैठता है और यह समझता है कि दुनिया उसके लिए बनाई ही नहीं गई है। हमने सिर्फ़ मिसाल के तौर पर ये कुछ नमूने पेश किए हैं, वरना इसके अनगिनत रूप हैं, जिनको हम रात-दिन अपने चारों तरफ़ देख रहे हैं।

इस्लामी शरीअत इनसान की भलाई और कामयाबी चाहती है, इसलिए वह उसको ख़बरदार करती है—

"तेरे ऊपर ख़ुद तेरे अपने भी हक़ हैं।" (हदीस : मुसनद अहमद)

वह (इस्लामी शरीअत) उन तमाम चीज़ों से इनसान को रोकती है जो उसको नुक़सान पहुँचानेवाली हैं, जैसे शराब, ताड़ी, अफ़ीम और दूसरी नशेवाली चीज़ें, सूअर का गोश्त, दरिन्दे और ज़हरीले जानवर, नापाक जानवर, ख़ून और मुरदार जानवर वग़ैरा। क्योंकि इनसान की सेहत, अख़लाक़ और अक़्ली और रूहानी ताक़तों पर इन चीज़ों का बहुत बुरा असर होता है। इनके मुक़ाबले में वह पाक और मुफ़ीद चीज़ों को उसके लिए हलाल और जाइज़ करती है और उससे कहती है कि तू अपने जिस्म को खाने-पीने की पाक चीज़ों से महरूम न कर क्योंकि तेरे जिस्म का तेरे ऊपर हक़ है।

वह उसको नंगा होने से रोकती है और उसे हुक्म देती है कि ख़ुदा ने तेरे जिस्म की ज़ीनत के लिए जो लिबास उतारा है उससे फ़ायदा उठा और अपने जिस्म के उन हिस्सों को ढका हुआ रख जिन्हें खोलना बेशर्मी है।

वह उसको रोज़ी कमाने का हुक्म देती है और उससे कहती है कि बेकार न बैठ, भीख न माँग, भूखा न मर। ख़ुदा ने जो ताक़तें तुझे दी हैं उनसे काम ले और जितना सामान ज़मीन और आसमान में तेरी परवरिश और सुहूलत के लिए पैदा किया गया है, उसको जाइज़ तरीक़ों से हासिल कर।

वह उसको नफ़्सानी ख़ाहिशों के दबाने से रोकती है और उसे हुक्म देती है कि अपनी ख़ाहिशों को पूरी करने के लिए निकाह कर।

वह उसको नफ़्सकुशी से मना करती है और उससे कहती है कि तू

आराम, सुहूलत और ज़िन्दगी के लुत्फ़ को त्याग न दे। अगर तू रूहानी तरक़्क़ी और ख़ुदा से नज़दीकी और आख़िरत की निजात चाहता है तो इसके लिए दुनिया छोड़ने की ज़रूरत नहीं। इसी दुनिया में पूरी दुनियादारी करते हुए ख़ुदा को याद करना और उसकी नाफ़रमानी से डरना और उसके बनाए हुए क़ानून की पैरवी करना, दुनिया और आख़िरत की तमाम कामयाबियों का ज़रिआ है।

वह ख़ुदकुशी को हराम करती है और उससे कहती है कि तेरी जान अस्ल में ख़ुदा की मिलकियत है। यह अमानत तुझे इसलिए दी गई है कि तू ख़ुदा की मुक़र्रर की हुई मुद्दत तक उससे काम ले, न कि इसलिए कि तू इसे ख़त्म कर दे।

लोगों का हक़

एक तरफ़ शरीअत ने इनसान को अपने नफ़्स और जिस्म के हक़ अदा करने का हुक्म दिया है तो दूसरी तरफ़ यह भी पाबन्दी लगा दी है कि इनको अदा करने में वह कोई ऐसा तरीक़ा न अपनाए जिससे दूसरे लोगों के हक़ों पर असर पड़े, क्योंकि इस तरह अपनी ख़ाहिशों और ज़रूरतों को पूरा करने से इनसान का अपना नफ़्स भी गन्दा होता है और दूसरों को भी तरह-तरह के नुक़सान पहुँचते हैं। इसलिए शरीअत ने चोरी, लूट-मार, रिश्वत, अमानत में ख़ियानत, सूद खाने और छल-कपट को हराम किया है, क्योंकि इनके ज़रिए इनसान जो कुछ फ़ायदा उठाता है, वह अस्ल में दूसरों के नुक़सान से हासिल होता है। झूठ, ग़ीबत (पीठ-पीछे बुराई करना), चुग़ली खाने और बुहतान लगाने को भी हराम किया है, क्योंकि ये सब हरकतें दूसरों के लिए नुक़सानदेह हैं। जुए, सट्टे और लॉटरी को भी हराम किया है, क्योंकि इसमें एक आदमी का फ़ायदा, हज़ारों, आदमियों के नुक़सान से होता है। धोखे और छल-कपट के लेन-देन और ऐसे सभी तिजारती समझौतों को भी हराम किया है जिनमें किसी एक फ़रीक़ को नुक़सान पहुँचने की उम्मीद हो। क़त्ल और फ़ित्ना-फ़साद को भी हराम किया है, क्योंकि एक शख़्स को अपने किसी फ़ायदे या अपनी किसी ख़ाहिश को पूरा करने के लिए दूसरों की जान लेने या उनको तकलीफ़ पहुँचाने का हक़ नहीं है। ज़िना और समलैंगिकता को

हराम किया है क्योंकि ये काम एक तरफ़ ख़ुद उस शख़्स की सेहत और अख़लाक़ को बरबाद करते हैं और दूसरी तरफ़ इनसे सोसाइटी में बेहयाई और बदअख़लाक़ी फैलती है, गन्दी बीमारियाँ पैदा होती हैं, नस्लें ख़राब होती हैं, फ़ितने मचते हैं, इनसानी ताल्लुक़ात बिगड़ते हैं और तहज़ीबो-तमद्दुन की जड़ कट जाती है।

ये तो वे पाबन्दियाँ हैं जो शरीअत ने इसलिए लगाई हैं कि एक शख़्स अपने नफ़्स और जिस्म के हक़ अदा करने में दूसरों के हक़ न मारे, मगर इनसानी कल्चर की तरक़्क़ी, भलाई और कामयाबी के लिए सिर्फ़ इतना ही काफ़ी नहीं है कि एक शख़्स दूसरे शख़्स को नुक़सान न पहुँचाए, बल्कि इसके लिए यह भी ज़रूरी है कि लोगों के आपसी ताल्लुक़ात इस तरह क़ायम किए जाएँ कि वे सब एक दूसरे की भलाई में मददगार हों। इसके लिए शरीअत ने जो क़ानून बनाए हैं उनकी सिर्फ़ ख़ास-ख़ास बातें हम यहाँ बयान करते हैं।

इनसानी ताल्लुक़ात की शुरुआत ख़ानदान से होती है, इसलिए सबसे पहले उसको देखिए। ख़ानदान अस्ल में शौहर, बीवी और बच्चों से मिलकर बनता है। इसके लिए इस्लामी क़ायदा यह है कि रोज़ी कमाना और ख़ानदान की ज़रूरतों को पूरा करना और अपने बीवी-बच्चों की हिफ़ाज़त करना मर्द का फ़र्ज़ है। औरत का फ़र्ज़ यह है कि मर्द जो कुछ कमाकर लाए उससे घर का इन्तिज़ाम करे। शौहर और बच्चों को ज़्यादा-से-ज़्यादा आराम पहुँचाए और बच्चों की तरबियत करे। बच्चों का फ़र्ज़ यह है कि माँ-बाप की इताअत करें, उनका अदब करें और जब बड़े हों तो उनकी ख़िदमत करें। ख़ानदान के इस इन्तिज़ाम को ठीक रखने के लिए इस्लाम ने दो तरीक़े अपनाए हैं। एक यह कि शौहर और बाप को घर का हाकिम बनाया है, क्योंकि जिस तरह एक शहर का इन्तिज़ाम एक हाकिम के बग़ैर और एक स्कूल का इन्तिज़ाम एक हेड मास्टर के बग़ैर नहीं चल सकता, उसी तरह घर का इन्तिज़ाम भी एक हाकिम के बग़ैर ठीक नहीं रह सकता। जिस घर में हर एक अपनी मर्ज़ी का मालिक हो उस घर में अफ़रा-तफ़री मचेगी, आराम और सुख नाम को न रहेगा। शौहर एक तरफ़ जाएगा और बीवी दूसरी राह लेगी और बच्चों की

मिट्टी ख़राब होगी। इन सब ख़राबियों को दूर करने के लिए घर का एक हाकिम होना ज़रूरी है और वह मर्द ही हो सकता है क्योंकि वह घरवालों की परवरिश और हिफ़ाज़त का ज़िम्मेदार है। दूसरी तदबीर यह है कि घर के बाहर के सब कामों का बोझ मर्द पर डालकर औरत को हुक्म दिया गया है कि बिना ज़रूरत घर से बाहर न जाए। उसपर घर से बाहर के फ़र्ज़ इसी लिए नहीं डाले गए, ताकि वह सुकून के साथ घर के अन्दर के फ़र्ज़ अंजाम दे और उसके घर से बाहर निकलने से घर की देखभाल और बच्चों की तरबियत में गड़बड़ी न पड़े। इसका मतलब यह नहीं है कि औरतें घर से बाहर क़दम ही न निकालें। ज़रूरत पड़ने पर उनको इजाज़त है। मगर शरीअत के मुताबिक़ उनके फ़र्ज़ का अस्ली दायरा घर है और उनकी पूरी ताक़त घर की ज़िन्दगी को बेहतर बनाने में लगनी चाहिए।

ख़ून के रिश्तों और शादी-ब्याह से ख़ानदान का दायरा फैलता है। इस दायरे में जो लोग एक-दूसरे से जुड़ते हैं उनके ताल्लुक़ात ठीक रखने और उनको एक-दूसरे का मददगार बनाने के लिए शरीअत ने कुछ क़ायदे बनाए हैं जो हिक्मत से भरे हैं। इनमें से कुछ ये हैं—

1. जिन मर्दों और औरतों को एक-दूसरे से घुल-मिलकर रहना पड़ता है, उनको एक-दूसरे के लिए हराम कर दिया है।[1] जैसे माँ और बेटा, बाप और बेटी, सौतेली बेटी और सौतेला बाप, सौतेली माँ और सौतेला बेटा, भाई और बहन, दूध शरीक भाई और बहन, चचा और भतीजी, फूफी और भतीज़ा, मामूँ और भाँजी, ख़ाला और भाँजा, सास और दामाद, ससुर और बहू। इन सब रिश्तों को हराम करने के अनगिनत फ़ायदों में से एक यह है कि ऐसे मर्द और औरतों के ताल्लुक़ात बहुत पाक रहते हैं और वे ख़ालिस मुहब्बत के साथ बेतकल्लुफ़ और बेझिझक एक-दूसरे से मिल सकते हैं।

2. हराम रिश्तों के अलावा घराने के दूसरे मर्दों और औरतों के बीच शादी-ब्याह को जाइज़ रखा जाए ताकि आपस के ताल्लुक़ात और बढ़ें। जो लोग एक-दूसरे की आदतों और मिज़ाज को जानते हैं उनके बीच शादी-ब्याह

1. यानी इन रिश्तों में एक-दूसरे से निकाह नहीं हो सकता।

का ताल्लुक़ ज़्यादा कामयाब होता है। अजनबी घरानों में जोड़ लगाने से अक्सर नाइत्तिफ़ाक़ी की सूरतें पैदा होती हैं। इसी लिए इस्लाम में कुफ़ूवाले को ग़ैर-कुफ़ू पर तरजीह दी गई है।

3. कुम्बे में ग़रीब और अमीर, ख़ुशहाल और बदहाल सब तरह के लोग होते हैं। इस्लाम का हुक्म यह है कि हर शख़्स पर सबसे ज़्यादा हक़ उसके रिश्तेदारों का है। इसका नाम शरीअत में 'सिला-रहमी' (रिश्तों को जोड़ना) है जिसकी बहुत ताकीद की गई है। रिश्तेदारों से बेवफ़ाई करने को 'क़तअ-रहमी' (रिश्तों को काटना) कहते हैं जो इस्लाम में बहुत बड़ा गुनाह है। कोई रिश्तेदार ग़रीब हो या उसपर कोई मुसीबत आए तो खाते-पीते रिश्तेदारों का फ़र्ज़ है कि उसकी मदद करें। सदक़ा और ख़ैरात में भी ख़ासतौर पर रिश्तेदारों के हक़ को ज़्यादा तरजीह दी गई है।

4. विरासत का क़ानून भी इस तरह बनाया गया है कि जो शख़्स कुछ माल छोड़कर मरे, चाहे माल कम हो या ज़्यादा, एक जगह सिमटकर न रह जाए, बल्कि उसके रिश्तेदारों को थोड़ा या बहुत हिस्सा पहुँच जाए। बेटा, बेटी, बीवी, शौहर, माँ, बाप, भाई, बहन, इनसान के सबसे ज़्यादा क़रीबी हक़दार हैं, इसलिए विरासत में पहले इन्हीं के हिस्से मुक़र्रर किए गए हैं। यह अगर न हों तो उनके बाद जो और क़रीब के रिश्तेदार हों, उनको हिस्सा पहुँचता है। इस तरह एक शख़्स के मरने के बाद उसकी छोड़ी हुई दौलत बहुत-से नातेदारों के काम आती है। इस्लाम के इस क़ानून की कहीं मिसाल नहीं मिलती। अब दूसरी क़ौमें भी इसकी नक़ल कर रही हैं, मगर अफ़सोस है कि मुसलमान अपनी जिहालत और नादानी की वजह से इस क़ानून को तोड़ रहे हैं। ख़ासतौर पर लड़कियों का हिस्सा न देने की रस्म पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के मुसलमानों में बहुत फैली हुई है, हालाँकि यह बहुत बड़ा ज़ुल्म है और क़ुरआन के खुले हुक्म की मुख़ालफ़त है।

ख़ानदान के बाद इनसान के ताल्लुक़ात अपने दोस्तों, पड़ोसियों, मुहल्लेवालों, शहरवालों और उन लोगों के साथ होते हैं जिनसे उसको किसी-न-किसी तरह के मामले पेश आते हैं। इस्लाम का हुक्म यह है कि उनके साथ सच्चाई, इनसाफ़ और अख़लाक़ का बरताव कीजिए, किसी को

तकलीफ़ न दीजिए, किसी का दिल न दुखाइए, बेहयाई की बातों और बदकलामी से बचिए। एक-दूसरे की मदद कीजिए, बीमार-पुरसी के लिए जाइए, कोई मर जाए तो उसके जनाज़े में शामिल होइए, किसी पर मुसीबत आए तो उससे हमदर्दी कीजिए। जो ग़रीब, मुहताज, माज़ूर लोग हों उनकी मदद छिपाकर कीजिए, यतीमों और बेवाओं की ख़बरगीरी कीजिए। भूखों को खाना खिलाइए, नंगों को कपड़ा पहनाइए, बेकार लोगों को काम पर लगाने में मदद कीजिए। अगर आपको ख़ुदा ने दौलत दी है तो उसको सिर्फ़ अपने ऐश में मत उड़ा दीजिए। चाँदी, सोने के बर्तन इस्तेमाल करना, (मर्दों के लिए) रेशमी कपड़े पहनना और अपने माल को बेकार की तफ़रीह और आसाइश में बरबाद करना इस्लाम में इसी लिए मना है कि जिस दौलत से हज़ारों लोगों को रोज़ी पहुँच सकती है, उसे कोई शख़्स सिर्फ़ अपने ऊपर ख़र्च न कर दे। यह एक ज़ुल्म है कि जिस रुपए से बहुतों के पेट पल सकते हों वह एक ज़ेवर की शक्ल में आपके जिस्म पर लटका रहे या एक बर्तन की शक्ल में आपकी मेज़ पर सजा करे या एक क़ालीन बना हुआ आपके कमरे में पड़ा रहे या आतिशबाज़ी बनकर आग में जल जाए। इस्लाम आपसे आपकी दौलत छीनना नहीं चाहता। जो कुछ आपने कमाया है या बाप-दादा की दौलत में से आपको मिला है, उसके वारिस आप ही हैं। वह आपको इस बात का पूरा हक़ देता है कि अपनी दौलत से लुत्फ़ उठाएँ। वह इसको भी जाइज़ रखता है कि जो नेमत ख़ुदा ने आपको दी है उसका असर आपके कपड़ों, मकान और सवारी से ज़ाहिर हो। मगर उसकी तालीम का मक़सद यह है कि आप एक सादा और दरमियानी ज़िन्दगी अपनाएँ, अपनी ज़रूरतों को हद से न बढ़ाएँ और अपने साथ अपने रिश्तेदारों, दोस्तों, पड़ोसियों, मुल्क और क़ौमवालों और आम लोगों के हक़ का भी ख़याल रखें।

इन छोटे दायरों से निकलकर अब बड़े दायरे पर निगाह डालिए जिसमें दुनिया के सारे मुसलमान आ जाते हैं। इस दायरे में इस्लाम ने ऐसे क़ानून और ज़ाब्ते मुक़र्रर किए हैं जिनसे मुसलमान एक-दूसरे की भलाई में मददगार हों और बुराइयों के इमकान कम-से-कम कर दिए जाएँ। उनमें से कुछ ये हैं—

1. क़ौमी अख़लाक़ की हिफ़ाज़त के लिए यह क़ायदा बनाया गया है कि जिन औरतों और मर्दों में निकाह हो सकता है वह एक-दूसरे से आज़ाद मेल-जोल न रखें। औरतों की सोसाइटी अलग रहे और मर्दों की अलग। औरतें ज़्यादातर घरेलू ज़िन्दगी के काम देखें। अलग ज़रूरत से बाहर निकलें तो बनाव-सिंगार के साथ न निकलें, सादा कपड़े पहनकर आएँ, जिस्म को अच्छी तरह ढाँकें। चेहरा और हाथ खोलने की बहुत ज़रूरत न हो तो उनको भी छिपाएँ और अगर वाक़ई कोई ज़रूरत पेश आ जाए तो सिर्फ़ उसको पूरा करने के लिए हाथ-मुँह खोलें। इसके साथ मर्दों को हुक्म दिया गया कि ग़ैर-औरतों की तरफ़ देखने से परहेज़ करें। अचानक नज़र पड़ जाए तो नज़र हटा लें। दोबारा देखने की कोशिश करना बुरा है और उनसे मिलने की कोशिश और भी बुरा है। हर मर्द और औरत का फ़र्ज़ है कि वह अपने अख़लाक़ और कैरेक्टर की हिफ़ाज़त करे। ख़ुदा ने नफ़्सानी ख़ाहिश को पूरा करने के लिए निकाह का जो दायरा तय कर दिया है, उससे बाहर निकलना तो दूर, उसकी ख़ाहिश भी अपने दिल में पैदा न होने दें।

2. क़ौमी अख़लाक़ ही की हिफ़ाज़त के लिए यह क़ायदा तय किया गया है कि कोई मर्द घुटने और नाफ़ के बीच का हिस्सा और कोई औरत चेहरे और हाथ के सिवा जिस्म का कोई हिस्सा किसी के सामने न खोले, चाहे वह उसका क़रीबी रिश्तेदार ही क्यों न हो। इसको शरीअत में 'सतूर' कहते हैं और इसका छिपाना हर मर्द और औरत पर फ़र्ज़ है। इस्लाम का मक़सद यह है कि लोगों में हया-शर्म का एहसास पैदा हो और वे बेहयाइयाँ न फैल सकें जिनसे आख़िरकार बदअख़लाक़ी जन्म लेती है।

3. इस्लाम ऐसी तफ़रीह और खेलों को भी पसन्द नहीं करता जो कैरेक्टर को ख़राब करनेवाले और बुरी ख़ाहिशात को उभारनेवाले और वक़्त और सेहत और रुपए को बरबाद करनेवाले हों। तफ़रीह अपने-आप में बहुत ज़रूरी चीज़ है। इनसान में ज़िन्दगी की ताज़गी और अमल की ताक़त पैदा करने के लिए, काम और मेहनत के साथ इसका होना भी लाज़िमी है। मगर तफ़रीह ऐसी होनी चाहिए जो रूह को ताज़ा करनेवाली हो न कि और ज़्यादा गन्दा और ख़राब करनेवाली। बेहूदा तफ़रीह, जिसमें हज़ारों आदमी एक

साथ बैठकर जुर्म की फ़र्ज़ी कहानियाँ और बेशर्मी की चीज़ें देखते हैं, सभी क़ौमों के अख़लाक़ और आदतों को बिगाड़नेवाली चीज़ें हैं, चाहे देखने में ये चीज़ें कितनी ही अच्छी क्यों न लगें।

4. क़ौमी इत्तिहाद (एकता) और फ़लाह-बहबूद (Welfare) के लिए मुसलमानों को ताकीद की गई है कि आपस की मुख़ालफ़त से बचें, गरोहबन्दी से परहेज़ करे। किसी मामले में इख़्तिलाफ़ हो तो नेक नीयती के साथ क़ुरआन और हदीस से उसका फ़ैसला करने की कोशिश करें। अगर फ़ैसला न हो सके तो आपस में लड़ने के बजाय ख़ुदा पर उसका फ़ैसला छोड़ दें। क़ौमी फ़लाह के कामों में एक-दूसरे की मदद करें। अपनी क़ौम के सरदारों की इताअत करते रहें। झगड़ा करनेवालों से अलग हो जाएँ और आपस की लड़ाई से अपनी ताक़त को बरबाद और अपनी क़ौम को बदनाम न करें।

5. मुसलमानों को ग़ैर-मुस्लिम क़ौमों से इल्म और फ़न हासिल करने और उनके कारआमद तरीक़े सीखने की पूरी इजाज़त है। मगर ज़िन्दगी में उनकी नक़्क़ाली करने से रोक दिया गया है। एक क़ौम दूसरी क़ौम की नक़्क़ाली उसी वक़्त करती है जब वह अपनी ज़िल्लत और कमतरी मान लेती है। यह ग़ुलामी की बदतरीन क़िस्म है। अपनी हार का खुला एलान है। इसका आख़िरी नतीजा यह है कि नक़्क़ाली करनेवाली क़ौम की तहज़ीब मिट जाती है। इसी लिए रसूलुल्लाह (सल्ल.) ने ग़ैर-क़ौमों के रहन-सहन को अपनाने से सख़्ती से मना किया है। यह बात मामूली समझ रखनेवाला आदमी भी समझ सकता है कि किसी क़ौम की ताक़त उसके लिबास या रहन-सहन के तरीक़े की वजह से नहीं होती, बल्कि उसकी ताक़त, उसके इल्म, उसके डिसप्लिन और उसके अमल की वजह से होती है। इसलिए अगर आप ताक़त हासिल करना चाहते हैं तो वे चीज़ें लीजिए जिनसे क़ौमें ताक़त हासिल करती हैं, न कि वे चीज़ें जिनसे क़ौमें ग़ुलाम होती हैं और आख़िरकार दूसरों में समा जाती हैं और अपना क़ौमी वजूद खो देती हैं।

ग़ैर-मुस्लिमों के साथ बरताव करने में मुसलमानों को तअस्सुब और तंग-नज़री से बचने की तालीम दी गई है। उनके बुज़ुर्गों को बुरा कहने या

उनके मज़हब की तौहीन करने से मना किया गया है। उनसे खुद झगड़ा निकालने से भी रोका गया है। वह अगर हमारे साथ मेल-मिलाप रखें और हमारे हुक़ूक़ पर हाथ न डालें तो हमको भी मेल-जोल रखने और दोस्ती का बरताव करने और इनसाफ़ के साथ पेश आने की तालीम दी गई है। हमारी इस्लामी शराफ़त का तक़ाज़ा यह है कि हम सबसे बढ़कर इनसानी हमदर्दी और खुश-अख़लाक़ी बरतें। बदअख़लाक़ी, ज़ुल्म, तंगदिली मुसलमान की शान के ख़िलाफ़ है। मुसलमान दुनिया में इसलिए पैदा किया गया है कि अच्छे अख़लाक़ और शराफ़त और नेकी का बेहतरीन नमूना बने और उसूलों से दिलों को जीत ले।

कायनात की तमाम चीज़ों का हक़

अब हम मुख़्तसर तौर पर चौथे क़िस्म के हक़ बयान करेंगे।

ख़ुदा ने अपनी अनगिनत मख़लूक़ पर इनसान को इख़्तियार दिए हैं। इनसान उनको अपने बस में करता है, उनसे काम लेता है, उनसे फ़ायदा उठाता है। इनसान ऊँचे दर्जे की मख़लूक़ है, इस हैसियत से उसको ऐसा करने का पूरा हक़ हासिल है, मगर साथ ही उन चीज़ों के हक़ भी इनसान पर हैं। वे हक़ ये हैं कि इनसान उनको बेज़रूरत बरबाद न करे, बग़ैर वजह से नुक़सान या तकलीफ़ न पहुँचाए। अपने फ़ायदे के लिए उनको कम-से-कम और उतना ही नुक़सान पहुँचाए जितना ज़रूरी हो। उनको इस्तेमाल करने के लिए अच्छे-से-अच्छा तरीक़ा अपनाए।

शरीअत में इसके बारे में बहुत-से उसूल बयान हुए हैं। मिसाल के तौर पर जानवरों को सिर्फ़ उनके नुक़सान से बचने के लिए या खाने के लिए मारने की इजाज़त दी गई है, मगर बेज़रूरत खेल और तफ़रीह के लिए उनकी जान लेने से रोका गया है। खाने के जानवरों को मारने के लिए 'ज़ब्ह' का तरीक़ा मुक़र्रर किया गया है जो जानवरों से मुफ़ीद गोश्त हासिल करने का सबसे अच्छा तरीक़ा है। इसके अलावा जो तरीक़े हैं वे अगर कम तकलीफ़देह हैं तो उनमें गोश्त के बहुत-से फ़ायदे ख़त्म हो जाते हैं, अगर गोश्त के फ़ायदे मिलते हैं तो वे तरीक़े 'ज़ब्ह' के तरीक़े से ज़्यादा

तकलीफ़देह हैं। इस्लाम इन दोनों पहलुओं से बचना चाहता है। इस्लाम में जानवरों को तकलीफ़ दे-देकर बेरहमी के साथ मारना सख़्त नापसन्द किया गया है। वह ज़हरीले जानवरों और दरिन्दों को सिर्फ़ इसलिए मारने की इजाज़त देता है कि इनसानी जान उनकी जान से ज़्यादा क़ीमती है। मगर उनको भी अज़ाब देकर मारना जाइज़ नहीं रखता। जो जानवर सवारी और सामान लादने के काम आते हैं उनको भूखा रखने और उनसे सख़्त मेहनत लेने और उनको बेरहमी से मारने-पीटने से मना करता है। परिन्दों को बिला वजह क़ैद करने को भी बुरा ठहराता है। जानवर तो जानवर इस्लाम इसको भी पसन्द नहीं करता कि पेड़-पौधों को बेज़रूरत नुक़सान पहुँचाया जाए। आप उनके फल-फूल तोड़ सकते हैं, मगर उन्हें बिना वजह बरबाद करने का आपको कोई हक़ नहीं। पेड़-पौधे तो फिर भी जान रखते हैं, इस्लाम किसी बेजान चीज़ को भी बरबाद करना जाइज़ नहीं रखता, यहाँ तक कि पानी को भी बिना वजह बहाने से मना करता है।

शरीअत—सबके लिए, हमेशा के लिए

यह शरीअत के अहकाम और क़ानून का एक बहुत ही सरसरी ख़ुलासा है जो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के ज़रिए से तमाम दुनिया के लिए और हमेशा के लिए भेजी गई है। इस शरीअत में इनसान और इनसान के बीच, अक़ीदे और अमल के अलावा और किसी वजह से फ़र्क़ नहीं किया गया है। जिन मज़हबों और शरीअतों में नस्ल, मुल्क और रंग के लिहाज़ से इनसानों में फ़र्क़ किया गया है, वे कभी आलमगीर (सारी दुनिया के लिए) नहीं हो सकतीं क्योंकि एक नस्ल का इनसान दूसरी नस्ल में तबदील नहीं हो सकता, न सारी दुनिया सिमटकर एक मुल्क में समा सकती है, न हब्शी (काले) की सियाही, चीनी का पीलापन और अंग्रेज़ की सफ़ेदी कभी बदल सकती है। इसलिए इस तरह के मज़हब और क़ानून एक ही क़ौम में रहते हैं। उनके मुक़ाबले में इस्लाम की शरीअत एक आलमगीर शरीअत है। हर वह शख़्स जो 'ला इला-ह इल्लल्लाह, मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' पर ईमान लाए, शरीअत के मुताबिक़, मुसलमानों की क़ौम में बराबरी के हक़ के साथ दाख़िल हो सकता है। यहाँ नस्ल, ज़बान, मुल्क, वतन, रंग, किसी भी चीज़ से कोई फ़र्क़ नहीं

पड़ता।

फिर यह शरीअत एक दाइमी और हमेशा रहनेवाली शरीअत भी है। इसके क़ानूनों की बुनियाद किसी ख़ास क़ौम और ख़ास ज़माने के रस्मो-रिवाज पर नहीं बल्कि उस फ़ितरत के उसूल पर है, जिसपर इनसान को पैदा किया गया है। जब यह फ़ितरत हर ज़माने और हर हाल में क़ायम है तो इसके मुताबिक़ बने क़ानून भी हर ज़माने और हर हाल में क़ायम रहने चाहिएँ।

OO